• वर्ष ६५ • अंक ५ • मूल्य ₹२०

मार्च (प्रथम) २०२३

परोपकारिणी

पाक्षिक

परोपकारी

परमहंस परिव्राजकाचार्य महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी की 200 वीं जयन्ती के शुभारम्भ पर दिल्ली कार्यक्रम में भारत के यशस्वी प्रधानमन्त्री श्रीमान् नरेन्द्र मोदी

प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी एवं गुजरात राज्यपाल आचार्य देवव्रत यज्ञ करते हुए

इंदिरा गांधी इंडोर स्टेडियम नई दिल्ली में उपस्थित जन समूह

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६५ अंक : ०५

दयानन्दाब्द: १९८

विक्रम संवत् - फाल्गुन शुक्ल २०७९

कलि संवत् - ५१२३

सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२३

■

सम्पादक

डॉ. वेदपाल

■

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,

केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

०८८९०३१६९६१

■

मुद्रक-देवमुनि-भूदेव उपाध्याय

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

■

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-४०० रु.

पाँच वर्ष-१५०० रु.

आजीवन (२० वर्ष) -६००० रु.

एक प्रति - २०/- रु.

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

०७८७८३०३३८२

ऋषि उद्यान : ०१४५-२९४८६९८

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

मार्च-प्रथम, २०२३

अनुक्रम

०१. महर्षि जन्मद्विशताब्दी समारोह...	सम्पादकीय	०४
०२. ऐसा बोध हमें कब होगा?	आ.रामनिवास गुणग्राहक	०५
०३. महर्षि दयानन्द का मूल्याङ्कन-२	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०६
०४. गार्हपत्याय जागृहि	आचार्य भद्रसेन	०८
०५. तेरी यही पहचान थी	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१३
* परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट		१७
०६. धर्मवीर श्री पं. लेखराम		१८
* परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम		२८
०७. संस्था समाचार	श्री ज्ञानचन्द	२९
०८. संस्था की ओर से....		३२
* 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति		३४

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

महर्षि जन्मद्विशताब्दी समारोह का शुभारम्भ

जन्म ग्रहण करना और वर्षों में उसकी गणना एक सहज प्रक्रिया है। मनुष्य के सन्दर्भ में जब वह एक शताब्दी पूर्ण कर दूसरी शताब्दी पूर्ण करने जा रहा हो, तब यह गणना साधारण गणना न रहकर कुछ असाधारण या विशिष्ट हो जाती है, क्योंकि व्यक्तिविशिष्ट तो दूसरी शताब्दी के समय होता नहीं। ऐसे में जब किसी के जन्म जयन्ती समारोह की द्विशताब्दी सोत्साह मनाई जा रही हो, तब निश्चय ही वह जन्म धारण करना साधारण नहीं था। यद्यपि आत्मा का देह के साथ सम्बद्ध होना और कुछ काल पश्चात् दोनों का पृथक् हो जाना सामान्य घटना है।

मात्र उनसठ (५९) वर्ष की आयु प्राप्त करना और उसके एक सौ उन्तालिस (१३९) वर्ष पश्चात् जन्मद्विशताब्दी समारोह के दो वर्ष चलने वाले आयोजनों का हर्षोल्लासपूर्वक शुभारम्भ एक अति विशिष्ट घटना है। अभी १२ फरवरी २०२३ को दिल्ली के इन्दिरा गांधी इन्डोर स्टेडियम में देश के यशस्वी प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी ने महर्षि दयानन्द सरस्वती के द्विजन्म शताब्दी समारोह का शुभारम्भ किया है।

उन्नीसवीं शती को पुनर्जागरण की शती कहा जाता है। मनुष्य समाज बहुपक्षीय है। प्राय: जागरण विषयक घटनाएँ भी उसके एक या एकाधिक पक्षों को प्रभावित करती हैं। पुनर्जागरण काल के महापुरुषों ने तत्कालीन मनुष्य और समाज को यथा-सामर्थ्य जागृत और प्रभावित किया, किन्तु महर्षि दयानन्द सरस्वती की दृष्टि बहुधा विभक्त समाज के किसी एक क्षेत्र पर जाकर पर्यवसित नहीं हो गयी थी।

तत्कालीन समाज जन्मना जातिप्रथा, उपासना की अनेक पद्धतियों के कारण अनेक सम्प्रदायों तथा बाहर से आने वाले और राजसत्ता के सहारे साम्प्रदायिक विस्तार करने वाले मतपन्थों के साथ ही विदेशी-विधर्मियों द्वारा शासित होने के कारण जर्जर हो चुका था। साथ ही धार्मिक चेतना और संस्कृति को भी अनेकविध उपहास का पात्र बनाया जा रहा था। ऐसे समय में किसी एक क्षेत्र में सुधार का प्रयास नवजीवन देने में समर्थ नहीं हो सकता था।

महर्षि ने गुरु विरजानन्द से शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् लगभग चार वर्षों तक गहन चिन्तन के पश्चात् हरिद्वार कुम्भ मेले के अवसर पर पाखण्ड खण्डिनी पताका को फहराया। यह पताका केवल धार्मिक क्षेत्र में व्याप्त पाखण्ड़ खण्डन का प्रारम्भ नहीं था। यह कुरीति के खण्डन के साथ सत्य के मण्डन का प्रयास था। ईश्वर के यथार्थ स्वरूप के प्रतिपादन का प्रारम्भ था, जिसका स्पष्ट दर्शन सन् १८६९ के काशी शास्त्रार्थ और मेला चांदापुर आदि के शास्त्रार्थों में दिखाई देता है।

उन्नीसवीं सदी का समाज जातियों में इस तरह विभक्त था कि जन्म के आधार पर व्यक्ति के अनेक धार्मिक अधिकार उससे छीन लिए गए थे। हजारों वर्षों के अन्तराल में महर्षि पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने पुणे में शूद्रातिशूद्रों की पाठशाला में जाकर तथाकथित समाज में निम्न वर्ग में माने जाने वालों को वेद का उपदेश किया था।

विदेशी-विधर्मियों द्वारा राज्यशासन करते समय इस देश की कृषि का आधार तथा सांस्कृतिक प्रतीक 'गौ' के प्रति किए जाने वाले व्यवहार को दृष्टिगत कर 'गौकृष्यादि रक्षिणी सभा' की स्थापना तथा लार्ड रिपन को गोहत्या बन्द कराने के लिए दो करोड़ हस्ताक्षरयुक्त ज्ञापन देने की मुहिम चलाई।

स्त्री एवं समाज के प्रत्येक व्यक्ति को न केवल शिक्षा के अधिकार का प्रतिपादन किया, अपितु समान रूप से वेदाध्ययन का अधिकार दिया।

वर्तमान में मतान्तरण को लेकर भले ही परस्पर

विरोधी विचार दिखाई देते हों, किन्तु उस काल में जब विधर्मी स्वच्छन्द रूप से मतान्तरण करा रहे हों और धर्माचार्य विरोध का साहस न जुटा पा रहे हों, तब मुहम्मद उमर की शुद्धि कर अलखधारी बना देना सत्य मण्डन का प्रबल एवं सार्थक प्रयास था।

ऐसे शक्तिशाली ब्रिटिशराज में भी स्वराज्य का उद्‌घोष करना, सांस्कृतिक अस्मिता के पुनर्जागरण हेतु पाश्चात्त्य भारतीयविद्याविदों की समालोचना, सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण में सरकार द्वारा नमक पर लगाए कर का विरोध करना आदि कार्य समाज को झकझोर कर उसके गौरवपूर्ण अतीत का स्मरण कराना उस काल में असाधारण और अतिविशिष्ट कार्य था।

आज द्विजन्मशताब्दी समारोह का शुभारम्भ उन महत्त्वपूर्ण कार्यों की न केवल स्वीकृति है, अपितु उनकी प्रासंगिकता का रेखांकन भी है। जब तक पृथिवी पर कहीं भी पाखण्ड या अन्धविश्वास है, तब तक महर्षि के विचार प्रासंगिक बने रहेंगे और उन्हें प्रसारित करने की आवश्यकता भी अनुभव की जाती रहेगी।

किन्तु समारोह का शुभारम्भ केवल उल्लास के ही क्षण नहीं है, अपितु महत्त्वपूर्ण गुरुतरदायित्व के प्रति रु स्र्वातमना समर्पित होने के भी क्षण हैं। महर्षि ने असत्य के खण्डन और मानव मात्र के कल्याण के स्वर्णिम सूत्र जिस वेद विद्या में खोजे थे आज उसी वेद विद्या को विश्व के प्रत्येक मानव तक पहुँचाने की चुनौती भरे क्षण भी हैं। यदि केवल हर्षोल्लास में ही मग्न रहकर काल का क्षेपण किया तो यह आत्ममुग्धता होगी तथा कर्त्तव्य निवर्हन के प्रति भी घोर उपेक्षा कही जायेगी। जिसका परिणाम मानव मात्र के जीवन को प्रकाश एवं उल्लास से परिपूर्ण करने में कहीं न कहीं अवरोध उत्पन्न करन का हेतु होगा। आवश्यकता है स्र्वातमना वेदविद्या के प्रचार और प्रसार के प्रति स्वयं को समर्पित कर देने की।

डॉ. वेदपाल

ऋषिबोध पर्व पर विशेष

अपरिहार्य कारणवश यह कविता गत अंक के स्थान पर अब छापी जा रही है।

ऐसा बोध हमें कब होगा?

आचार्य रामनिवास 'गुणग्राहक'

१. सबको वैदिकपथी बना दें।
वेदज्ञान का सूर्य उगा दें।।
हर हृदय सच से स्वीकारे।
स्वर्ग उतार धरा पर ला दें।।
सबके सुख हित रहें समर्पित।
हों न कदापि किञ्चित दर्पित।।
पर-पीड़ा को निज सम जानें।
रहे दूर करने हित अर्पित।।
आँगन धरा विश्व घर जैसा,
सब सुख-दु:ख सबने मिल भोगा...

२. लूट फूट का ही दुष्फल है।
आज विखण्डित अन्तस्तल है।।
कल्पित हैं बहु धर्म जातियाँ।
कटा-फटा माँ का अंचल है।।
ईश्वर भी तो एक नहीं है।
किञ्चित शेष विवेक नहीं है।।
भाषा, धर्म, जातियाँ अगणित।
क्या अब भी अतिरेक नहीं है??
दूर करें वेदोक्त धर्म से, ओढ़ा हुआ पुराना चोगा...
ऐसा बोध हमें कब होगा?

३. ज्ञानहीन विद्वान् बन रहे।
धर्मगुरु नादान बन रहे।।
कंचन-काया के कामीजन।
मूर्खों के भगवान् बन रहे।।
हत्या भी शुभ कर्म हो गया।
रक्तपिपासु धर्म हो गया।।
खोजो रे सज्जनता-संयम।
सद्‌भावों का मर्म खो गया।।
पतन आधुनिकता बन बैठा,
योग यहाँ कहलाता योगा...
ऐसा बोध हमें कब होगा?

महर्षि दयानन्द का मूल्याङ्कन-२

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

आर्यसमाज में भले ही किसी की इतिहास शास्त्र में गति न हो, परन्तु आर्यसमाज का स्वतन्त्रता संग्राम में योगदान पर लिखने वालों की गिनती करना ही अति कठिन है।

'भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का आरम्भ ऋषि जी से हुआ'

भारतीय इतिहास तथा ऋषि दयानन्द जी से एक बहुत बड़ा अन्याय यह हुआ कि जनजागरण का शंखनाद करने वाले ऋषि दयानन्द के दमन अथवा विरोध में गोराशाही द्वारा की गई पहली कार्यवाही अथवा घटना की ओर इतिहासज्ञों का ध्यान ही न गया। मित्रो! याद रखो, "Little things are great for the greatmen and great things are little for the little men." अर्थात् छोटी-छोटी दिखने वाली घटनायें भी महापुरुषों के लिये बड़ी होती हैं और बड़ी-बड़ी घटनायें भी तुच्छ सोच वाले बौने दिमागों के लिये छोटी होती है।

हम यह घटना- यह पूरा प्रसंग ऋषि जीवन से यहाँ पर उद्धृत करते हैं। इस पर तनिक चिन्तन कीजिये। ऋषि का मूल्याङ्कन करना अति सहज हो जावेगा।

"काशी के लोगों ने यह देखा कि अब हमारा बचना कठिन है। शास्त्रार्थ न करने की लज्जा से ही अभी तक हम सिर नहीं उठा सकते इस पर स्वामी जी बार-बार विज्ञापन लगवाकर हमें स्मरण करवाते प्रत्युत हमें और अधिक लज्जित करते हैं। यदि अब उनके व्याख्यान हो गये तो हमारी और भी मिट्टी खराब होगी। अतः सब ओर से पण्डितों ने सर्वसम्मति करके मिस्टर वाल (Wall) महोदय कलेक्टर काशी के यहाँ यह प्रार्थना पत्र दिया कि स्वामी जी के व्याख्यानों से यहाँ बहुत झगड़ा (दंगा) होगा। इसलिये ये व्याख्यान रोके जाएँ।

तदनुसार २० दिसम्बर १८७९ को ठीक उस समय जब श्री स्वामी जी व्याख्यान देने के लिए उस स्कूल के द्वार पर पहुँचे तो मैजिस्ट्रेट का पत्र स्वामी जी को प्राप्त हुआ कि इस समय काशी में कोई धार्मिक शास्त्रार्थ नहीं होना चाहिये।"[१]

सज्जनवृन्द गोराशाही का यह आदेश- यह प्रतिबन्ध किसी भारतीय विचारक, सुधारक महापुरुष की वाणी पर लगाया गया पहला दमनकारी आदेश था। पाठक स्वयं सोचें कि ऋषि दयानन्द तो अकेले मानस थे। उनके साथ दंगा करने के लिये कौनसा संगठन था? उनके विरोध में काशी के सभी पत्थर पूजक पौराणिक ब्राह्मण थे। दंगे के नाम पर महर्षि की जनजागरण करने वाली वाणी को गोराशाही ने एक हथियार बना लिया। प्रभावशाली पत्रों ने सरकार के इस पग की निन्दा की। ऋषि भी सरकार से पूछ रहे थे कि किस कारण से ऐसा कठोर दमनकारी पग उठाया गया है। ऋषि न दबे और न डरे। गोराशाही को अपना आदेश निरस्त करना पड़ा। यह जनजागरण के सूत्रधार की एक ऐतिहासिक विजय थी। इस घटना को समझे बिना ऋषि का मूल्याङ्कन अधूरा है। कोई भी ऋषि विरोधी इस घटना से पहले किसी भी भारतीय लीडर और विचारक के विरुद्ध किसी ऐसे पग का कोई उदाहरण इतिहास से नहीं दे सकता। जो इससे पूर्व बड़े व्यक्ति समझे जाते थे वे सब राज्याधिकारी सरकार भक्त अथवा सरकार का गुणगान करने वाले थे।

वह उपासक थे, ईश्वर नहीं थे- महर्षि दयानन्द ने अपने आपको ईश्वर का एक उपासक ही माना। अपने आपको पूजा-पुजापा के लोभ से व्यर्थ में महिमा मण्डित करके जनता को भ्रमित नहीं किया। गुरुडम का प्रचार करने वाले न जाने गुरु की महिमा को बढ़ाते हुए क्या-क्या कहते रहते हैं। ए. ओ. ह्यूम के एक पत्र का उत्तर देते हुये ऋषि ने बड़े सरल, भावपूर्ण और मार्मिक शब्दों में उसे लिखा, "**मैं उपासक हूँ ईश्वर नहीं हूँ।**"

मत पन्थों के संस्थापकों द्वारा स्वयं को बढ़ा चढ़ा कर बताने का ही परिणाम है कि हम मुसलमानों का यह तराना सुनते रहे-

खुदा जिसको पकड़े मुहम्मद छुड़ावे
मुहम्मद के पकड़े छुड़ा कोई नहीं सकता

ऋषि ने उपासना के विषय में खुलकर यह उपदेश सन्देश दिया, ''**उसी की उपासना करनी योग्य है।**'' इसी के साथ इस दार्शनिक सिद्धान्त का प्रबल प्रचार किया कि ''अपने भले-बुरे कर्मों का फल कर्त्ता को भुगतना ही पड़ता है। कोई भी पाप क्षमा नहीं करवा सकता।''

लाहौर में ऋषि जी 'उसी की उपासना करनी योग्य है, विषय पर हृदय स्पर्शी व्याख्यान दे रहे थे। व्याख्यान की समाप्ति पर एक श्रोता ने अन्य-अन्य श्रोताओं की व्याख्यान पर प्रतिक्रिया सुनकर लाला साईंदास जी के सामने अपनी भावपूर्ण प्रतिक्रिया देते हुये यह कहा, ''मेरा पिछला जो जीवन बीता है वह तो आधा व्यर्थ ही गया है।'' ऐसा कहने वाला एक मान्य ब्राह्म समाजी नेता था। महात्मा हंसराज जी ने यह प्रसंग सुनाते हुए उस ब्राह्मसमाजी नेता का नाम नहीं बताया।

ईश्वरेतर पूजा के घोर विरोधी- मैंने तत्कालीन पत्रों व अभिलेखों की सघन खोज करके यह जाना कि वह लाला काशीराम प्रधान, ब्राह्मसमाज पंजाब ही हो सकते हैं। वह ऋषि के व्यवहार, सोच व सद्गुणों पर मुग्ध होकर लिखा करते थे। **आपने ऐसा क्यों कहा?** यह उन्हीं के शब्दों में सुनिये, ''मैंने ईश्वर की उपासना विषय पर लिखते व बोलते हुए कभी भी इस प्रकार से निडरतापूर्वक खुलकर ईश्वरेतर पूजा का ऐसा प्रबल खण्डन नहीं किया।''

महर्षि का मूल्याङ्कन करते हुये किसी विरले ही विद्वान् विचारक ने ऋषि के विषय में यह बात कही व लिखी होगी।

योग साधना का अहंकार व प्रचार- कुछ सन्तों महन्तों में अपनी योग साधना का बड़ा विचित्र अहंकार व प्रचार की ललक देखी गई है। योग विद्या की बहुत चर्चा करने वाले मेरे एक प्रेमी कृपालु बाबा जी यदा कदा मुझे पत्र लिखते रहते थे। मैंने नोट किया था कि अपने पत्र में वह यह अवश्य लिखा करते थे, ''मैं स्वस्थ हूँ। नित्य प्रति इतने घण्टे योग करता हूँ। प्रतिदिन योग शिविर में भाग लेने वालों को योग सिखाता हूँ।'' उनके प्रत्येक पत्र में ऐसी दुहाई पढ़कर मैंने उनका एक ऐसा पत्र अपनी फाईल में सुरक्षित कर लिया। मेरे मन में आया कि यह रोगग्रस्त बाबाजी कैसे योगी हैं जो सदा योग साधना का ढोल पीटते रहता है।

ऋषि दयानन्द के पत्र व्यवहार में तथा ऋषि मुनियों के जीवन की चर्चा में अतीत काल के साहित्य में तो योगनिष्ठा, योग सिखाने व योग करने के ऐसे प्रचार का कोई प्रमाण नहीं मिलता।

इससे महर्षि दयानन्द के जीवन तथा साधना का मूल्याङ्कन करने में मुझे पर्याप्त सफलता मिली। अब मैंने नये सिरे से इसी दृष्टि से ऋषि जीवन का सूक्ष्म अध्ययन किया।

भीड़ तन्त्र का योग कैसा?- ऋषि जी योगियों से योग सीखने की ललक से, मृत्यु पर विजय पाने की उत्कट इच्छा से गृह त्याग करके न जाने कहाँ-कहाँ किस महात्मा के पास गये। उन्होंने कितने-कितने घण्टे योग साधना की इसका लेखा जोखा किसने किया? ''**प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो, पूर्ण हो, पूर्ण हो**'' उनके इस अन्तिम कथन को सुनकर पढ़कर ही जिज्ञासु जन उनकी सिद्धि को जान गये। पहचान गये। अजमेर में अन्त समय में अंग्रेज डॉ. Adam भी उनके धीरज, शान्ति तथा मुस्कान को देखकर उनका मूल्यांकन करते हैं।

मुझे मौत का डर नहीं- हरिद्वार के कुम्भ के मेला पर जब सब विरोधियों ने (पं. श्रद्धाराम फिलौरी भी) ऋषि जी से छेड़छाड़ करने की दृष्टि से उन्हें जूना अखाड़ा में आकर शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी तो प्रभुप्रिय दयानन्द ने उन्हें इस चुनौती का उत्तर देते हुये लिखा, ''मुझे मरने का भय या चिन्ता तो नहीं है, परन्तु मुझे अपने वैदिक मिशन की चिन्ता है जिसके लिये मैं जी रहा हूँ। ऋषि के

इस पत्र से स्पष्ट है कि उनकी मृत्यु शीघ्र हो सकती है। मैडम ब्लैवटस्की ने भी ऐसा ही लिखा है कि उन्हें अपनी मृत्यु के शीघ्र होने का आभास था। ऐसा ऋषि से संवाद करते हुए उसे पता चला। ऋषि ने उसी पत्र में उन्हें लिखा, शास्त्रार्थ का स्थान न आपका होगा न ही मेरा कोई अन्य स्थान ही शास्त्रार्थ के लिये हो सकता है।''

स्वामी सर्वानन्द जी ने कहा था- महर्षि का मूल्याङ्कन करते हुये पूज्य स्वामी सर्वानन्द जी के एक कथन का स्मरण आते ही मैं ऋषि जी के जीवन का मर्म समझ गया। यदा कदा आस्तिक गुणी विद्वान् उनसे उपासना की चर्चा तो किया करते। कभी कुछ उपासकों (यथा हेमचन्द्र बंगाली सज्जन) को योग का प्रशिक्षण भी दिया। श्री स्वामी सर्वानन्द जी ने एक बार कहा, ''अतीत में भीड़ इकट्ठी करके किसी ऋषि मुनि ने बड़ी संख्या को योग साधना सिखाई और करवाई? भीड़ तन्त्र में ही धर्मप्रचार करके फोटो खिंचवाने वाले, नाम कमाने वालों ने आर्यसमाज को भ्रमित कर दिया है।'' स्वामी श्रद्धानन्द जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी दोनों मृत्युञ्जय प्रभु प्रिय योगी थे। एक ने संगीनों से सीना अड़ाकर संसार को चौंका दिया तो दूसरे के सिर पर लोहारू में कुल्हाड़े का वार किया गया। बिना क्लोरोफॉम के सिर को १३-१४ टांके लगवाये। इन दोनों महात्माओं ने कब भीड़ एकत्र करके योग का प्रशिक्षण दिया?

कविरत्न प्रकाश जी अपने एक गीत में यह लिखा था-

जब कि बुझने लगा शहर अजमेर में
देह दीपक दयानन्द ऋषिराज का
तेरी इच्छा हो पूर्ण हे प्यारे प्रभु
बोलकर वाक्य यह मुस्कराने लगे

उनके सर्वव्यापक, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् एक ईश्वर की सत्ता तथा उसकी दया व न्याय पर अटल विश्वास ने सब मतपंथों को झकझोर कर रख दिया। इस्लाम के इस काल के सर्वोच्च लोकप्रिय लेखक डॉ. गुलाम जेलानी की अन्तिम वेला की एक पुस्तक अल्लाह की आदत में ईश्वर के गुणकर्म तथा स्वभाव की चर्चा को एक-एक पृष्ठ पर कोई पढ़ेगा तो महर्षि दयानन्द के दार्शनिक विचारों की छाप एक-एक पृष्ठ पर मिलेगी। दया और न्याय की वही परिभाषा व व्याख्या मिलेगी जो ऋषि ने सत्यार्थप्रकाश में दी है। इस्लाम की चर्चा व प्रचार में हूरों व ग़िलमान का अपना ही महत्त्व रहा है। आसमानों की भी बहुत चर्चा होती रही है। डॉ. जेलानी ने हूरों व ग़िलमान का उल्लेख विशेष किया ही नहीं। यह महर्षि दयानन्द के दर्शन का ही प्रभाव है। इसका कोई दूसरा कारण है ही नहीं।

ऋषि का मूल्याङ्कन मत पंथों की नई-नई दार्शनिक सोच को सामने रखे बिना ठीक-ठीक व यथार्थ हो ही नहीं सकता।

भीड़ में अकेला ही विजयी होता रहा- 'काशी का हर कंकर शंकर माना जाता था।' काशी शास्त्रार्थ में साढ़े तीन सौ जाने-माने पण्डित उसको पराजित करने के लिये जुटाये गये। अकेला वेद रक्षक, एक ईशोपासक दयानन्द एक ओर था। जीत किसकी हुई यह इतिहास से पूछिये। सन् १८८० में आर्य सन्मार्ग दर्शिनी सभा में भी देश भर से तीन सौ दक्षिणा पंथी पण्डित एकत्र हुये। जिसे पराजित करना था- जिसका केस उन के सामने था उस ऋषि दयानन्द को अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिये बुलाया ही नहीं, किसी को ऐसा साहस ही न हो सका। चाँदापुर आदि कई शास्त्रार्थों में ऋषि अकेला एक ओर होता था और पादरियों मौलवियों का जमघट उसको परास्त करने के लिये प्रतिपक्ष में होता था।

एक-एक शास्त्रार्थ में ऋषि सर्वत्र छा जाता रहा यह सब ने देखा। जालन्धर का एक शास्त्रार्थ मुसलमानों ने स्यालकोट से पहले प्रकाशित किया। उसके प्रकाशक मुसलमान ने खुलकर ऋषि की प्रशंसा की है। मौलवी के व्यवहार की निन्दा की है। उस शास्त्रार्थ का पूरा चित्र ऋषि जीवन में हमने दिया है। इन तथ्यों द्वारा ऋषि का मूल्याङ्कन स्वत: हो रहा है। **(क्रमश:)**

- वेदसदन, नई सूरजनगरी, अबोहर, पंजाब
दूरभाष - ९४१७६४७१३३

गार्हपत्याय जागृहि

आचार्य भद्रसेन

परोपकारी के पाठक गत अङ्कों से विद्यावयोवृद्धमनीषी के अनुभवजन्य चिन्तन के सार से लाभान्वित हो रहे हैं। प्रस्तुत लेख में आचार्य प्रवर ने मन्त्रासं की हृदयग्राही व्याख्या संवाद के माध्यम से प्रस्तुत की है। वर्तमान में बिखरते परिवारों के लिये यह शिक्षा नित्य ही संजीवनी का काम करेगी। -सम्पादक

एक दिन सुवर्चा प्राध्यापिका के पास बी.एड. की छात्रायें आईं और कहने लगीं, आपने पाठ्यक्रम के साथ ही जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में भी आत्मविश्वास के साथ जीने का जो मूलमन्त्र बताया है, वह आजीवन स्मरण रहेगा तथा आपका स्मरण भी करवायेगा। हाँ, आज हम एक विशेष दृष्टि से आई हैं, आशा है आप के पास सुरभि के विवाह का आमन्त्रण पत्र आया होगा। इस मास क्रमश: और भी आने वाले हैं। अत: हम सहेलियों की इच्छानुसार इस अवसर पर महिला संगीत के प्रथम दिन एक विशेष आयोजन किया जा रहा है। उसमें सुरभि ने सहेलियों को विशेष रूप से स्मरण किया है, जिससे इन दिनों की याद अनोखी बन जाए। वैसे भी सन्निकट के विवाहिता इन बालिकाओं में से सुरभि ही अकेली स्थानीय है, अन्य सारी स्थानीय नहीं हैं। अत: सुरभि के यहाँ ही इन सबका स्वागत, सम्मान अभिनन्दन हो जाए। आप उस सामूहिक शुभ अवसर पर ही पधारें और पहले वाले मूलमन्त्र की तरह अब भी अवसर के अनुरूप वैवाहिक जीवन की सफलता का गुरु मन्त्र बताएँ।

निर्दिष्ट दिन यथा समय सभी ने मिलकर प्रभु भक्ति का गीत गाया और तब प्रा. सुवर्चा जी से विशेष अनुरोध किया गया। इस पर प्रा. सुवर्चा ने कहा आज जिस विशेष भावना से हम एकत्रित हुई हैं, उसकी सफलता का मूलमन्त्र है-

'गार्हपत्याय जागृहि' ऋग्वेद १०,८५,२७

जिसका सीधा-सा अर्थ है- गार्हपत्य के लिए सदा सजग रहो। हाँ गार्हपत्य शब्द को सुनकर वैदिक साहित्य से परिचित प्रश्न उभार सकती हैं कि यह तो यज्ञ की एक अग्नि का नाम है। नि:सन्देह विशेष यज्ञों में आहवनीय, गार्हपत्य, दक्षिण, अन्वाहार्यपचन आदि अग्नियों, वेदियों के नाम और वर्णन हैं। हाँ गार्हपत्य अग्नि से गृहस्थों द्वारा किए जाने वाले नामकरण आदि संस्कार और यज्ञ होते हैं।

हम जिस गार्हपत्य की चर्चा कर रहे हैं, वह तो वह है जिसका निर्देश **''अस्थूरिणौगार्हपत्यानि सन्तु''** यजु. २,२७ में हुआ है। अर्थात् उद्धरण गार्हपत्य शब्द के अर्थ, भाव को सुनिश्चित कर देता है। अर्थात् गार्हपत्य एक बैलवाली गाड़ी की तरह एकांगी न हो। यह शब्द गृहपति से तद्धित में बनता है, जिसका अभिप्राय है, गृहपति के कर्त्तव्य-कर्म जिसको आजकल गृहविज्ञान के नाम से स्मरण किया जाता है। गृह के परिवार का उत्तरदायित्व है, वह-वह ही गृहपति है अर्थात् घरेलू कार्य को यहाँ गार्हपत्य कहा जा रहा है।

वेदे गृहान् गृहपत्नी यथास: ।। ऋग्वेद १०.८५.२६

अर्थात् गृहपत्नी (घर के उत्तरदायित्व को सम्भाले) गृह की शोभा बन-यही बात वधू को सीधे रूप से इस प्रकार कही है। अत: यह शब्द घरेलू कर्त्तव्य के लिए ही आया है। सुमेधा (विशेष अनुमति लेकर) क्या वेद की दृष्टि में भी नारी जीवन का लक्ष्य चौका, चूल्हा, बच्चों तक सीमित है। प्रा. सुवर्चा- वेद में महिला का जीवन, सर्वस्व इतना सीमित नहीं है। हाँ यह उसका एक भाग अवश्य है जहाँ तक आम भारतीय भावना की बात है, वहाँ नारी के जीवन का मोक्ष, सफलता विवाह में ही मानी जाती है। चाहे इस समय हम इस एकांगी धारणा की चर्चा को नहीं लेंगी। इस दृष्टि से मनुस्मृतिकार ने कहा है कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह वेद के अनुरूप ही है-

"**यः कश्चित् कस्यचिद् धर्मो मनुना परिकीर्तितः।**
स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः।।"

२.७

यहाँ स्मृति शब्द का सारांश समझ ही है, अर्थात् वेद के अध्ययन के पश्चात् मनु ने जो कुछ समझा वह ही मनुस्मृति है। जैसे कि इस प्रसंग में ९,२६,२८ के श्लोक है। पुनरपि यह बात विशेष ध्यान के योग्य है कि, जब कोई अपनी इच्छा से विवाह को स्वीकार करता है, तो उसके प्रति उसका सजग होना स्वाभाविक हो जाता है।

प्रत्येक युवक और युवती में विवाह की मनोकामना स्वाभाविक है, तभी तो मनुस्मृति में विवाहित गृहस्थ की प्राणवायु से उपमा दी गई है। जैसे प्राण वायु के बिना जीवन जीवित नहीं रह सकता वैसे ही गृहस्थ (उत्तरदायित्व सम्भालने वालों) के बिना समाज अधिकतम नहीं चल सकता। अतः विवाह सामाजिक-धार्मिक-पारिवारिक मर्यादाओं व्यवस्थाओं के निर्वाह का उत्तरदायित्व है। तभी मनुस्मृतिकार ने दुर्बल= योग्य प्रशिक्षित हुए बिना विवाह आश्रम में प्रवेश से मना किया है। विवाह कर्त्तव्य पालन से ही 'सोने में सुहागे' की उक्ति के अनुरूप इच्छाओं की पूर्ति के साथ खुशियों का केन्द्र बन जाता है।

यथा वायुं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तवः।
तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्तन्ते सर्व आश्रमाः।।

मनु. - ३.७७

जैसे वायु के आश्रय से सब जीवों का जीवन चलता है। वैसे ही गृहस्थ के आश्रय से अन्य (ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, संन्यास) आश्रमियों का निर्वाह होता है।

यस्मात्त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम्।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही।। ३.७८
यथा नदीनदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।
तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्।।

६.९०

अतः- **गृहस्थ उच्यते श्रेष्ठः सः त्रीनेतान् बिभर्ति हि।।**

६.८९

क्योंकि अन्य आश्रमियों को अन्न, वस्त्र आदि देकर गृहस्थी पालता है। अतः गृहस्थी अन्य आश्रमियों का उसी प्रकार आधार सम्भालने वाला है। जैसे नदियों को समुद्र सम्भालता है। इसलिए गृहस्थ अन्य आश्रम वालों से उत्तरदायित्व सम्भालने के कारण अधिक सामाजिक (श्रेष्ठ) है।

सुखं चेहेच्छेता वित्तं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः।
सः संधार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।।

मनु ३.७९

यह गृहस्थ वस्तुतः अन्यों का दायित्व सम्भालने वाला संसारी सुखों का भण्डार है। अतः यह दुर्बल शरीर-इन्द्रियों और निर्बुद्धि व्यक्तियों द्वारा चलाया नहीं जा सकता और पिङ्गल के प्रथम सूत्र धीः श्रीः स्त्री से यह भी भावार्थ भी अभिध्वनित होता है। अर्थात् विद्या प्राप्ति और धनार्जन के आरम्भ करने के पश्चात् ही जीवनसाथी को स्वीकार करना चाहिए।

गार्हपत्य के प्रति सजग होने के लिए हमें कुछ बातों की और विशेष ध्यान देना होगा। इस दृष्टि से सबसे पहली बात यह है कि हमारे मन में यह दृढ़ मूल होना चाहिए कि विवाह जीवन विकास का एक पड़ाव साधन है न कि झंझट, जी का जंजाल। वैराग्य के नाम पर इसकी निन्दा या इसको हल्का नहीं समझना चाहिए, अपितु युवा मन कि प्रकृति का एक साधक पहलू है। यदि कोई विवाह को झंझट, जी का जंजाल मानेगी तो क्या वह उसे मन से अनुराग कर सकेगी? और न जीवन विकास का साधन मान सकेगी। अतः विवाह को प्राकृतिक रूप और जीवन विकास का सहयोगी साधन समझते हुए उसके प्रति मन में अनुराग संजोना चाहिए। निःसन्देह परिवार का उत्तरदायित्व लेते ही आवश्यकताओं पूर्ति के लिए सजगता परिश्रम अपेक्षित है। ये मूलभूत आवश्यकताऐं किसी की सजगता परिश्रम से ही पूर्ण

होती हैं अपनी और अपनों की आवश्यकताओं की पूर्ति में जुट कर घरेलू कार्यों से जीवन को सरस बनाना चाहिए।

दूसरी विशेष ध्यातव्य बात यह है कि जिसको जीवनसाथी स्वीकार किया है, उसके प्रति उस परिवार के प्रति सच्चा-सुच्चा बनाना चाहिए। तभी पारस्पारिक सद्भाव सहयोग विश्वास अपनापन प्राप्त होता है। जहाँ ऐसा होगा, वहीं सदा परस्पर का आकर्षण, लगाव बना रहेगा। अत: एव भारतीय परम्परा में विवाह के पश्चात् परिणीता का वही घर ही परिवार है और वही सम्बन्ध ही मुख्य सम्बन्ध हो जाता है। जिसका भाव है, कि यह अब अपना है। यह ठीक है, कि जहाँ जो भी लम्बे समय तक पले, रिश्तों में जिए, जहाँ सुयोग्य-स्वावलम्बी हो उस को एकदम भूलना कठिन हो जाता है। पुनरपि विवाह के अनन्तर उस-उस के साथ उस-उस रूप में अपने आप को जोड़ने का हर तरह से प्रयास प्रारम्भ कर देना चाहिए।

आपस के व्यवहार में हम देखती हैं कि तीन तरह की प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। कुछ लड़कियाँ ऐसी होती है कि वे इस भावना को समझकर नए घर, परिवार को अपना स्वीकार कर लेती हैं और जल्दी ही उन सभी में घुलमिल जाती हैं इससे उसको नए परिवार में अपनेपन से सम्मान मिलता है।

कुछ ऐसी होती है, जो नए परिवार में घुलने-मिलने में कुछ समय लेती है। दो-चार फेरों (आने-जाने) के बाद अपने मन को समझा लेती है और उनका दिल-दिमाग नए परिवार में रम जाता है। इस तरह वे नए परिवार के सदस्यों से अपनापन पैदा करने में सफल हो जाती हैं।

किन्तु कुछ कन्यायें ऐसी भी होती हैं, जो मायके की हर वस्तु, बात को गुणगान करने ही लगी रहती हैं। ससुराल की प्रत्येक वस्तु स्थिति, (विभिन्न ओंपरी) हल्की लगती है। प्रारम्भ में तो लाड़-चाव प्यार के कारण ससुराल वाले उसके इस व्यवहार को टाल देते हैं, पर जब बात सीमा से बाहर होने लगती है, वह सब को अखरती है, अटपटी लगती है। तब ऐसी लड़की को शिकायत होती है कि मुझे यहाँ स्नेह, सम्मान, अपनापन नहीं मिलता, पर इस सारे का जो मूल कारण है, वह है अपने भावनात्मक सम्बन्ध को न बदलना।

इस प्रसंग में तीसरी जो ध्यान देने योग्य बात है कि इस नए सम्बन्ध वालों को सदा परस्पर आदर, सम्मान देना चाहिए। वह चाहे पुराने ढंग की मान्यता से हो या नए दृष्टि से मित्रों की तरह। हम परस्पर मान-सम्मान किस को कैसे देते हैं? इसकी अनुभूति रोजमर्रा के बोलचाल तथा बर्ताव से स्वत: हो जाती है। जैसे-जैसे विवाह के वर्ष व्यतीत होने लगते हैं। हम परस्पर एक-दूसरे को उपेक्षित करने लगते हैं और सामान्य शिष्टाचार भी भूलते जाते हैं। तब पहले जैसा विवाह में आकर्षण, लगाव नहीं लगता और ऊब आने लगती है। अतएव वेद ने सजग करते हुए कहा है-

'जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम्'

(अथर्ववेद-३.३०)

अर्थात् पत्नी पति के लिए सदा प्रिय और शान्तिदायक, वचन बोले, क्योंकि हमारे पारस्परिक सम्बन्धों, भावनाओं को जोड़ने वाले-मीठे बोल ही होते हैं, तभी तो वेद बार-बार औखे होकर बोलने से बचने की बात करता है। तब सुलभा ने अनुमति लेकर पूछा, ये सब बातें क्या केवल नारियों के लिए ही हैं? विवाह होते ही सब केवल लड़कियों को ही शिक्षा देना शुरू कर देते हैं? सुवर्चा- नि:सन्देह हमारे यहाँ यह एकांगी बना दिया गया है। वेद वस्तुत: जीवन जगत् का संविधान है और संविधान सभी के लिए समान होता है। विवाह के पश्चात् दोनों जीवनसाथी बन जाते हैं। साथियों में समानता परस्पर समझने, आदर देने की भावना और इस के लिए मधुर बोल बहुत जरुरी हैं। हाँ गार्हपत्य शब्द को स्पष्ट करने के लिए वेद की एक सूक्ति उद्धृत की थी। अस्थूरिणौ गार्हपत्यानि सन्तु। ऋग्वेद-६.१५.१९ अर्थात् हमारे परिवार

एक बैल वाली गाड़ी की तरह एकांगी न हो। अत: दोनों इस जीवन को सर्वांगीण बनायें और दोनों में कर्त्तव्यों, उत्तरदायित्वों, व्यवहारों, परिश्रम आदि का सन्तुलन हो एक तरफा बोझ किसी पर भी न डाला जाए। एक के लिए ही सारे नियम, धर्म कार्य न हों।

जैसे किसी वाहन के पहिए एक जैसे ही होने चाहिएं। उनमें बनावट की दृष्टि से कच्चा माल जहाँ एक हो, वहाँ की बनावट भी समान हो। उनका आकार-प्रकार एक जैसा हो। उनमें ओवर हालिंग, तेल आदि की व्यवस्था भी समान स्तर पर होनी चाहिए, तभी यात्रा सुखद होती है। विभिन्नता में वह रस नहीं आता। इसलिए शास्त्र दोनों गुण, स्वभावों, कर्म विचारों की एकरसता की विशेष चर्चा करते हैं।

"उद वहेत द्विजो भार्या सवर्णा..."

मनु. ३.४

जीवन साथी के नाते इस वैवाहिक जीवन के प्रत्येक पहलू में परस्पर सहयोग, सद्भाव, अपनापन स्वत: अपेक्षित हो जाता है। तभी तो वेद ने दोनों के लिए सखा शब्द का प्रयोग किया है।

"अनृक्षरा ऋजवः सन्तु पन्था देभिः सखायो यन्ति नो वरयम्"

जिसका भाव है- जिनका ख्यान=स्थिति स्वभाव, विचार, निर्णय समान है। एक अन्य मन्त्र में **(अभि प्रवन्त समनेव योषाः)** ऋग्वेद- ४.५८.८ समनसः शब्द आया है। जिसको स्पष्ट करते हुए निरुक्त कार ने कहा है **(समननं समननाद वा वा सम्मानाद वा)** दैव- १.४ अर्थात् दोनों मन विचारों से जहाँ समान हो, वहाँ परस्पर सम्मान,आदर देने की भावना होनी चाहिए। अत: गार्हपत्य का जो भी रूप, स्थिति, व्यवस्था हो उसके प्रति सजग सावधान, तत्पर, उत्साहित रहना चाहिए और तभी 'जहाँ चाह- वहाँ राह' की लोकोक्ति चरितार्थ होती है। यह ध्यान रहे कि मूल मन्त्र, गुरुमन्त्र स्वयं जपा समझा जाता है। अत: दम्पति स्वयं एक-दूसरे को समझे एक-दूसरे के गुण दोष स्वीकार करें, सहे।

अब सौंप दिया इस जीवन का सब भार-इस द्वि-अर्थक गीत के साथ दोनों किस प्रकार समरूप भाव हो, वेद ने एतदर्थ जो उपमा दी है, वह देखते ही तो बनती है- **'समाहो हृदयानि नौ'** (अर्थात् हम दोनों के हृदय परस्पर इस प्रकार एकरस, एक रूप हों जैसे दो स्थानों के जल मिलकर एक हो जाते हैं।)

इस सारे विवेचन के साथ गृहस्थ में स्वाभाविक रूप से और वेद की दृष्टि से महिला का सम्बन्ध, योगदान, उत्तरदायित्व अधिक होता है। अत: नारी से अधिक आशा की जाती है। तभी तो वेद- **"जायेदमस्तं सम्राज्ञी श्वसुरे भव"** एतादृश मन्त्रों में वधू को घर का दायित्व सौंपा गया है। भारतीय परम्परा में सम्भवत: अतएव वधू से ही शिला को पैर लगवाया जाता है।

टिप्पणी-

वाच्यर्था नियताः सर्वे वाङ्मूला वाग्विनिसृताः।

मनु. ४,२५६

अर्थात् हमारे सारे आपस के अधिकतर व्यवहार वाणी=बोलचाल पर निर्भर हैं। अत: वाणी ही उनका मूल है और वाणी ही से ये सिद्ध होते हैं, क्योंकि-

इदमन्धन्तमः कृत्स्नं, जायेत भुवन त्रयम्।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।।

दण्डीकृत काव्यादर्श- १,४

संसार में यदि भाषा का व्यवहार न होता, तो गूंगों की तरह यह सारी दुनिया दु:खों, विवशताओं से भर जाती। अत एव शब्दों की उपयोगिता को दर्शाते हुए निरुक्तकार ने लिखा है- **'शब्देन संज्ञाकरणं व्यवहारार्थं लोके-१,१'**= पारस्परिक व्यवहार की सिद्धि के लिए ही संसार में शब्दशास्त्र है। भर्तृहरि ने वाक्यपदीय में शब्दों के महत्त्व को ब्रह्मकाण्ड के १२३ और १२८ श्लोकों में विस्तार से अभिव्यक्त किया है।

१८२, शालीमार नगर, होशियारपुर-१४६००१ (पंजाब) - ९४६४०६४३९८

तेरी यही पहचान थी

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

सैद्धान्तिक दृष्टि से महर्षि दयानन्द जी ने ईश्वर के नित्य अनादि ज्ञान वेद की आधारशिला पर आर्यसमाज की नींव रखी, परन्तु यदि हम इतिहास की दृष्टि से देखें तो अखण्ड ब्रह्मचारी प्रकाण्ड वैदिक विद्वान् आचार्य दयानन्द ने अपना अमर बलिदान देकर उस पर आर्यसमाज की नींव रखी थी। आर्यसमाज के इतिहास की विलक्षणता एक यह भी तो है कि इसने स्वल्प काल में गौरवपूर्ण बलिदानों की एक अखण्ड परम्परा चला दी। देश धर्म की सद्ज्ञान वेद की रक्षा के लिये आर्यजाति के इतिहास में ऐसी दूसरी कोई संस्था न मिलेगी जिसने अपने जीवन की पहली शताब्दी पूरी होने से बहुत वर्ष पहले धर्म की बलिवेदी पर बाल, वृद्ध, जवान, शिशु तथा महिलाओं के बलिदान की एक अखण्ड परम्परा चलाकर एक अनुपम इतिहास रचा हो।

बातें बनाना तो बहुत सरल है। करके दिखाना अति कठिन है। धर्म की रक्षा के लिये, देश की शान के लिये कमलापुर (कर्नाटक) ग्राम में आर्यो के एक तीन वर्षीय शिशु का भी बलिदान दिया गया है। इतिहास साक्षी है कि देश धर्म की रक्षा के लिये हुपला ग्राम (कर्नाटक) में आर्यसमाज ने सबसे प्रथम एक महिला का बलिदान देकर आर्य जाति के इतिहास को एक नई दिशा दी। आगे चलकर माता गोदावरी जैसी कई आर्य ललनाओं ने देश की अखण्डता के लिये, स्वराज्य के लिये और ओ३म् ध्वज के लिये अद्भुत बलिदान दिया। जीवित उस वीराङ्गना को जलाया गया। ऐसा इतिहास और किसके पास है?

ऋषि दयानन्द जी के बलिदान के थोड़ा ही समय पश्चात् तेजस्वी प्रतापी मिशनरी पहलवान चिरञ्जीलाल ने अन्धविश्वासों से युद्ध लड़ते हुये **सर्वप्रथम जेल यात्रा करके अमानवीय यात्रायें सहीं**। सन् १८९३ में इस बलिदानी ने भरी जवानी में जीवन की आहुति देकर ऋषि मिशन को पहला हुतात्मा मिशनरी दिया। चिरञ्जीव पहलवान के बलिदान को अभी पाँच वर्ष भी पूरे नहीं हुये थे कि उत्साह के अंगारे पं. लेखराम ने मुगलराज की उन्मादी परम्परा के पश्चात् मतान्धता तथा इस्लाम की तीखी छुरी के सामने अपनी छाती खोलकर सत्यासत्य का निर्णय करते हुये निडरतापूर्वक अपना बलिदान देकर देशभर के न्यायप्रिय लोगों को चौंका दिया। इस्लाम के एक मूर्धन्य विद्वान् मौलाना अब्दुल्ला ने पं. लेखराम के पवित्र जीवन, सत्यनिष्ठा तथा वीरता के कारण आपको 'गौरवगिरि' (कोहे वकार) विशेषण से विभूषित करके स्मरण किया। इस्लामी इतिहास में कितने नेताओं व मौलवियों के लिये 'कोहे वकार' विशेषण का प्रयोग किया गया?

पं. लेखराम का दोष क्या था? उनका दोष यही था कि आप श्रीराम का, माता कौशल्या, सीता माता, गऊ तथा वेद का अपमान न सह सके।

नास्तिक मत के वेद हैं स्वामी
है यही मुद्दआ वेदों का।

इस पद्य का अर्थ यह है कि वेद नास्तिक मत के पक्षधर हैं बस यही वेद का प्रयोजन है। आज तो 'वेद और कुरान' पुस्तक को कई विद्वान् इस्लामी मौलाना वेद को एकेश्वरवादी घोषित करने में गौरव अनुभव करते हैं। वह लिखते हैं वेद के उपास्य एक परमात्मा का नाम वेद आदि शास्त्रों में ओ३म् है और तो और वेद को नास्तिकता का समर्थक बताने वाला ही पं. जी की हत्या करवा कर उस कुकृत्य पर गौरव करने वाला मिर्ज़ा गुलाम अहमद अपनी अन्तिम पुस्तक में लिखता है कि 'हम खुदा से डरकर वेद को ईश्वर की वाणी मानते हैं।' क्या खुलकर मिर्जा ने वेद का इस पोथी में गुणगान

किया है या नहीं?

संसार के महापुरुषों के सम्मान का ढोल पीटने वाले मिर्ज़ाई मत के संस्थापक ने लिखा है-

लेखू मरा था कटकर जिसकी दुआ से आख़िर
घर घर पड़ा था मातम वोह मीरज़ा यही है

क्या पं. लेखराम जी के नाम को अशिष्टता से भद्दी भाषा में 'लेखू' लिखना यह सभ्यता है या गाली? यह तो उसकी महानता व लोकापकार का फल है कि उस विभूति के बलिदान पर घर घर में शोक छा गया और नबी के पुत्र मिर्ज़ा बशीर अहमद एम.ए. लिखित मिर्ज़ा गुलाम अहमद की जीवनी पढ़ लीजिये कि गुलाम अहमद के निधन पर उसके शव को पुलिस की सहायता से कादियाँ लाया जा सका। कितना विरोध, कितना अपमान हुआ यह मौलाना सना उल्ला अथवा अन्य मौलवियों के शब्दों में हम नहीं देते। यह सब कुछ मिर्ज़ाई साहित्य पढ़ लीजिये। पुलिस न आती तो शव की क्या दुर्गति होती?

मुर्दो को ज़िन्दा करते थे जो वोह तो मर गये
ज़िन्दों के कत्ल को यह मसीह उल-जमाँ हुये

क्यों मिर्ज़ाइयों! जीवितों की हत्या का दोषी यहाँ मौलाना सना उल्ला कादियानी नबी को खुलकर घोषित कर रहे हैं या नहीं? इस पद्य का कुछ उत्तर है तो दीजिये। कादियानी नबी ने 'वलद-उल-ज़ना' शब्द का यत्र तत्र प्रयोग किया है। नबी के इस मधुर वचन का अर्थ तो बता दीजिये। इससे बड़ी गन्दी गाली क्या किसी कोश में मिलती है?

मिर्ज़ा कादियानी ने पं. लेखराम जी को कादियाँ में चमत्कार दिखाने के लिये बुलवाया फिर चमत्कार दिखाया क्यों न? अल्लाह का भेजा गया नबी (prophet) होने का दावा करने वाले मिर्ज़ा को जब कादियाँ में उसके इलहामी कोठा में चमत्कार दिखाने के लिये, पण्डित जी विवश कर रहे थे तो पण्डित जी ने तब मिर्ज़ा से यह भी कहा था कि ख़ारक आदात (सृष्टि नियम विरुद्ध) शब्द कुरान में ही नहीं तो आप चमत्कार दिखायेंगे क्या? मिर्ज़ा ने तब कहा, ''यह शब्द कुरान में है।'' पण्डित जी ने अपने झोले से कुरान निकालकर आगे रख दी और कहा, ''दिखाओ इसमें से यह शब्द कहाँ है?''

'रईसे कादियाँ' के लेखक मौलाना रफ़ीक दिलावरी अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि पं. लेखराम का कथन सत्य था। मिर्ज़ा पृष्ठ उलट-पलट कर कुरान में से यह शब्द न दिखा सका। इसकी पैग़म्बरी और कुरान की विद्वत्ता की पोल कई मुसलमानों (जो तब पण्डित जी के साथ थे) के सामने खुल गई। एक और इस्लामी स्कॉलर श्री फ़ोनिक्स (phoenix) की लाहौर से छपी पुस्तक His Holiness के पृष्ठ ३५ पर लिखा है, "There are no serious grounds to doubt that lakhram was lounched into eternity by one of ghulam ahmead's angles the death of lekhram infuriated the hindus." लेखक पण्डित जी की मृत्यु का दोषी मिर्ज़ा के फ़रिशते को बताता है। लेखक का कथन है कि ऐसी मृत्यु से पं. लेखराम को अमरत्व प्राप्त हुआ। फिर वही लेखक लिखता है, "He creased for a time to glory in his hophecy and for got its divine eraigin. He besought the brithis police badian and gourd this person. He amply deserved thier gretitude, he told then, for its was its prayer that didi not let the sun set on the british empire." कादियाँ में अपनी रक्षा के लिये अंग्रेज पुलिस को बुलवाया। अंग्रेजी राज में सूर्य के अस्त न होने को अपनी प्रार्थना का फल बताता था। अंग्रेजों का आभारी तो था ही। इस उद्धरण से पैग़म्बरी की व पं. लेखराम जी की मृत्यु की सब भविष्यवाणियों की शव परीक्षा लेखक न कर दी।

वही लेखक लिखता है, "His prohecy concerning lekhram is to say the best, unchir al sous." अर्थात् पं. लेखराम विषयक

मिर्ज़ा की भविष्यवाणी तो सर्वाधिक बोगस निकली है। ऐसी बेजान, साहस शून्य, कायरपूर्ण कि कुछ न कहा जावे तो ठीक है।[१]

आर्यसमाज सिद्धान्त रूप में भविष्यवाणियों को नहीं मानता। कई बार दूरदर्शी महापुरुषों के चिन्तन मनन से उनके मुख से निकली बात सत्य निकल आती। पं. लेखराम जी ने अपनी मृत्यु विषयक मिर्ज़ा की एक भविष्यवाणी पर १-८-१८९३ के आर्यगज़ट पर आपने विद्वत्तापूर्ण युक्तियुक्त लेख लिखा। अल्लाह से प्राप्त इलहाम में मिर्ज़ा ने श्री पं. लेखराम को 'फिशावरी' लिखा। पं. लेखराम का कभी पेशावर से सम्बन्ध रहा। वह 'फिशावरी' तो नहीं थे। वह सर्वज्ञ कैसा?

कोर्ट में लिखकर देना पड़ा- मिर्ज़ा को बटाला के कोर्ट में लिख के देना पड़ा कि भविष्य में वह किसी की मृत्यु के बार में इलहाम प्रकाशित नहीं करेंगे। इसंसे मिर्ज़ा की पैगम्बरी की और उस इलहाम देने वाले अल्लाह की सारी हवा निकल गई। दोनों सरकार के डण्डे से भयभीत हो गये।

मिर्ज़ा ने 'मक्तूबात' में लिखा है कि पं. लेखराम ने मेरी मृत्यु विशूचिका से लिखी है, परन्तु मैं तो मरा नहीं। पं. लेखराम की भविष्यवाणी मिथ्या निकली। आर्य धर्म तो भविष्यवाणियाँ मानता नहीं। तीर तुक्के से कई एक कथन सत्य निकल आते हैं। रही विशूचिका से मिर्ज़ा की मृत्यु सो पाठक नोट कर लें कि एक मुसलमान साहित्यकार ने मिर्ज़ा की मृत्यु पर उसके विरोधियों का यह पद्य अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है-

''हो के हैजा थीं लाचार, मिर्ज़ा मोया मंगलवार''

अब मिर्ज़ाई मक्तबूबात में मिर्ज़ा के कथन को और हैज़ा से नबी की मौत पर ऐसे-ऐसे प्रमाणों पर भी विचार कर लें। मिर्ज़ा का यह कथन मिर्ज़ाई क्यों भूल जाते हैं ''हत्यारा मनुष्य था, ख़ुदा का फ़रिशता नहीं।''[२]

'सिंघ सभा' बटाला के सम्पादक श्री दौलतराम लिखित ट्रैक्ट 'पं. लेखराम और श्रीकृष्ण का दर्शन' में लिखा है ३० नवम्बर १९०४ ई. को लाहौर में मुझको श्रीकृष्ण जी महाराज और पं. लेखराम जी का दर्शन हुआ और उस समय स्वप्न में मेरी जो बात हुई मैं पाठकों की भेंट करता हूँ।...इसी पुस्तक में कोई दो पृष्ठ छोड़कर आगे उसके पृष्ठ छह पर श्रीकृष्ण महाराज कीयह भविष्यवाणी दी है, ''इसी जन्म में बहुत दु:ख पायेगा। वह (मिर्ज़ा गुलाम अहमद) छह वर्ष के भीतर मर जायेगा।''

मिर्ज़ा का निधन सन् १९०८ में लाहौर में हो गया। मिर्ज़ाई सिंघ सभा पत्रिका की इस भविष्यवाणी पर चुप्पी क्यों साधे हुये हैं? मैंने कदियाँ के एक उत्सव पर यह पुस्तक पढ़कर सुनाई थी। इसके कुछ पृष्ठों का फोटो रक्तसाक्षी पं. लेखराम पुस्तक की समाप्ति पर दिया है।[३] क्या सत्यासत्य के निर्णय के लिये यह छोटा प्रमाण है? मिर्ज़ा चार वर्ष में ही मर गया। कैसा कठोर सत्य है।

मौलाना सना उल्ला जी ने, देहरादून के एक मुसलमान लेखक ने, मौलाना अब्दुल्ला मेमार ने मिर्ज़ा गुलाम अहमद की फ़ारसी वर्णमाला के एक-एक अक्षर के अनुसार गालियों की सूचियाँ प्रकशित की हैं। पं. लेखराम जी की मृत्यु की भविष्यवाणियाँ करने वाले कादियानी नबी की एक पुस्तक को सिख विद्वान् राजेन्द्र सिह ने गालियों की लुगात (शब्दकोश) लिखा है। इसके विपरीत पण्डित लेखराम जी के साहित्य मेंकिसी विरोधी ने एक भी असंसदीय शब्द होने का दोष नहीं लगाया।

पं. लेखराम जी ने जालन्धर छावनी में मिर्जा गुलाम अहमद द्वारा श्री गुरु नानकदेव के मुसलमान होने के दुष्प्रचार के प्रतिवाद के लिये एक विद्वत्तापूर्ण युक्ति व प्रमाणों से परिपूर्ण व्याख्यान दिया। सेना के सिख जवान भारी संख्या में उस व्याख्यान को सुनने आये थे। उस प्रभावशाली भाषण को सुनक सिख जवानों में पं. लेखराम जी को कन्धों पर उठाने की होड़ सी लग गई। महात्मा मुंशीराम जी इस दृश्य को देखकर दंग रह गये। ऐसा था व्यक्तित्व पं. लेखरामजी का।

पं. लेखराम जी की शिष्य परम्परा की एक लम्बी

सूची है। मेहता जैमिनि, मास्टर आत्माराम, मास्टर मुरलीधर, पं. धर्मभिक्षु, मुसाफ़िर विद्यालय आगरा के सब विद्वान्, लाला बनवारीलाल करनाल, कुँवर सुखलाल, ठाकुर अमरसिंह, पं. शान्तिप्रकाश, महाशय चिरञ्जीलाल प्रेम, पण्डित त्रिलोकचन्द्र शास्त्री, पं. निरञ्जनदेव, रब्बे कादियाँ, राजेन्द्र 'जिज्ञासु', पं. देवप्रकाश गण्डासिंहवाला विद्यालय के सब स्नातक पं. लेखराम की शिष्य परम्परा होने का गौरव रखते आये हैं। इस सूची में आने वाले सब विद्वानों ने वाणी व लेखनीसे जीवन भर विरोधियों तथा विधर्मियों के आक्षेपों तथा आक्रमणों का स्वर्णिम इतिहास रचकर दिखाया है।

महात्मा मुंशीराम जी वैसे तो पं. लेखराम जी के संगीसाथी तथा सहयोगी थे, परन्तु हम प्रत्येक दृष्टि से महात्मा जी को पं. लेखराम जी की श्रेणी का महापुरुष मानते हैं। अपने बलिदान व निडरता से भी महात्मा जी भी पं. लेखराम की परम्परा में ही आते हैं।

पं. भगवद्दत्त जी ने दो बारअर्यगजट में पं. लेखराम जी लिखित ऋषि जीवन की महिमा पर लिखते हुये यह लिखा है कि ऋषि जीवन पर आरम्भिक काल में लिखे गये सब ग्रन्थों का आधार पं. लेखराम लिखित ऋषि जीवन ही है यथा लाला लाजपतराय, मेहता राधाकिशन, श्री रामविलास शारदा, श्री चिमनलाल, पं. लक्ष्मण आर्योपदेशक, बाबा छज्जू सिंह, श्री अर्जनसिंह लिखित ऋषि जीवन इसी कोटि में आते हैं।

पं. इन्द्र जी और पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक तो डंके की चोट से ऐसे लिखते हैं कि ऋषि जीवन चरित्र लिखने वाला कोई भी लेखक पं. लेखराम जी के ग्रन्थ के बिना एक भी पृष्ठ नहीं लिख सका। पं. घासीराम जी की मान्यता भी यही है। देवेन्द्र बाबू ने ऋषि जीवन की खोज में प्रशंसनीय कार्य किया, परन्तु उनके ग्रन्थ की अस्सी प्रतिशत सामग्री पं. लेखरामजी की ही देन है। हम अनेक बार यह लिख चुके हैं कि महर्षि के बलिदान के पश्चात् जब देश भर में 'ऋषि जीवन' लिखने की माँग होने लगी तो जिन लेखकों ने ऋषि जीवन लिखने की पत्रों में घोषणायें कीं, वह एक पृष्ठ भी लिखकर न दे सके। इस करणीय कार्य के लिये नररत्न पं. लेखराम के बिना कोई दूसरा गुणी, ज्ञानी, पुरुषार्थी परमार्थी न मिला। पहला पग तो पहला पग ही होता है। पं. लेखराम जी को अपना प्राक्कथन लिखने का अवसर मिलता तो इस ग्रन्थ का मूल्य और महत्त्व और बढ़ जाता।

यह भी ध्यान रहे कि इतना विशाल ग्रन्थ तो पण्डित जी ने दिया ही है इसके अतिरिक्त भी 'कुल्लियाते मुसाफिर' में यत्र तत्र ऋषि जीवन की कुछ सामग्री है जिसको श्री पण्डित जी अपने लिखे जीवन चरित्र में न दे सके यथा मौलाना अब्दुल अज़ीज की शुद्धि ऋषि का बलिदान होते ही हो सकी। यह कितना बड़ा चमत्कार था?

ऋषि के पत्र व्यवहार के प्रथम व बेजोड़ आन्दोलन के जन्मदाता लेखराम– महर्षि दयानन्द के पत्र व्यवहार की खोज तथा संग्रह का आधुनिक भारत में सबसे पहले आन्दोलन छेड़ने वाले विद्वान् पं. लेखराम जी थे। आपसे प्रेरणा पाकर महाशय कृष्ण, महात्मा मुंशीराम, महाकवि शंकर, सरदार रूपसिंह, पं. भगवद्दत्त जी, पं. चमूपति, श्री नन्दकिशोर, पं. युधिष्ठिर मीमांसक, डॉ. वेदपाल जी, डॉ. धर्मवीर जी, मान्य विरजानन्द जी और राजेन्द्र 'जिज्ञासु' ने इस आन्दोलन को आगे बढ़ाने तथा सफल बनाने का बहुत ठोस और अविस्मरणीय कार्य करके आर्यसमाज के साहित्य व इतिहास इन दोनों को समृद्ध बनाया है। आचार्य रामदेव जी की सेवायें भी इस दिशा में अपने आप में एक उदाहरण हैं। मैं समय-समय पर इस आन्दोलन पर नया प्रकाश डालता आया हूँ।

अब नये सिरे से जो चिन्तन मनन किया है उसका लाभ ज्ञान पिपासु सज्जनों को पहुँचाने के लिये एक नई पुस्तक लिखने का मन बनाया है। मेरे द्वारा सम्पादित महात्मा मुंशी राम जी वाले 'अपूर्व पत्र व्यवहार' का अभी तक आर्यसमाज ने पूरा लाभ नहीं उठाया। किसी ने इस संग्रह का गम्भीर अध्ययन करके इतिहास शास्त्र को लाभान्वित नहीं किया। विहंगम दृष्टि से देखने से कुछ

पल्ले पढ़ने वाला नहीं है।

पं. लेखराम जी के जीवन पर 'रक्तसाक्षी पं. लेखराम' मेरे ग्रन्थ तथा पं. देवप्रकाश जी के 'दाफ़अ ओहाम' पुस्तक को पं. निरञ्जन देव जी ने 'हरफ़े आख़िर' (अन्तिम प्रमाण या निर्णय) लिखा है तो क्यों? इस जीवन-चरित्र के बिना पं. ' 'लेखराम को कोई नहीं समझ सकता।

टिप्पणी :

१. द्रष्टव्य His Holiness page 15

२. द्रष्टव्य रक्तसाक्षी पं. लेखराम पृष्ठ ३८१

३. द्रष्टव्य 'रक्तसाक्षी पं. लेखराम' तृतीय संस्करण २०१७ ई. पृष्ठ ५३७-५४० तक।

- वेदसदन, नई सूरजनगरी, अबोहर, पंजाब

परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्य पर

पुस्तक का नाम	पृ. सं.	वास्तविक मूल्य रुपये	छूट के साथ मूल्य रुपये
ऋग्वेद संहिता	९००	५००	४००
अथर्ववेद संहिता	५५०	४००	३००
ऋग्वेद भाष्य नवम भाग	४००	३००	२२५
पञ्चमहायज्ञ विधि	६२	२०	१५
वैदिक संध्या मीमांसा	१०७	४०	३०
महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग)	१३९२	८००	५००
महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र	३३६	२००	१००
कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर (दोनों भाग)	९३८	९५०	६००
डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग)	८१४	५००	२५०

यजुर्वेद भाष्य (महर्षि दयानन्द सरस्वती) पृष्ठ संख्या- २१९७, चार भागों का मूल्य = १३००/-

डाक-व्यय सहित विशेष छूट पर उपलब्ध मूल्य = १०००/-

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-दूरभाष - 0145-2460120, चलभाष - 7878303382

VEDIC PUSTKALAYA
0510800A0198064
1342679A
0510800A0198064.mab@pnb

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु खाताधारक का नाम - वैदिक पुस्तकालय, अजमेर

(VEDIC PUSTKALAYA, AJMER)

बैंक का नाम - पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-

0008000100067176

IFSC - PUNB0000800

UPI ID :

0510800A0198064.mab@pnb

६ मार्च १८९७ बलिदान दिवस पर–

धर्मवीर श्री पं. लेखराम

संसार भावमय है। संसार केवल भाव का प्रसार है। भाव ही संसार में शासन करते हैं। मानव–मन में प्रथम भाव का ही आविर्भाव होता है। उसके अनुसार ही वह क्रिया में प्रवृत्त होता है। साधारण मनुष्यों के मानसरोवरों में भावों के आविर्भाव तिरोभाव की तरंग सदा उठती रहती हैं। उनके बहुत से भाव दरिद्रों के मनोरथों के समान उत्पन्न होते ही विलीन हो जाते हैं, किन्तु महाशयों के भाव कार्य परिणत हुए बिना नहीं रहते। महापुरुषों के भाव तो संसार में हलचल मचा देते हैं, जगत् की बड़ी–बड़ी क्रान्तियों के कारण महापुरुषों के भाव ही हुए हैं। संसार के सारे मतमतान्तर महापुरुषों के विविध भावों का ही प्रपञ्च हैं। जब किसी महापुरुष के हृदय पर किसी भाव का बलपूर्वक आघात होता है, तभी वह संसार में प्रचार पाता है और किसी विशेष मत का रूप धारण करता है। नाना मतों की संस्थापना की यही प्रक्रिया और इतिहास भी यही है। किन्तु भावों के आघात–प्रतिघात का प्रभाव भावुक हृदयों पर ही चिरस्थायी होता है। इसलिए संसार में जितने परिवर्तन, विप्लव तथा क्रान्तियां हुई हैं वे सब भावुक महापुरुषों द्वारा ही हुई हैं। जनसाधारण ऐसे भावुक महापुरुषों को उन्मत्त व पागल कहकर हँसता है और वे वस्तुतः अपनी धुन में उन्मत्त वा मस्त रहते हैं। संसार के इतिहास को बनाने वाले विविध धर्मों के संस्थापक अपने विचारों के पीछे पागल बने हुए अपनी धुन के पक्के ऐसे ही उन्मत्त महानुभाव थे। यदि धर्म संस्थापकों की जीवनियों का मनन किया जाय तो यह विशेषता उन सब में सामान्य रूप से उपलब्ध होगी। बुद्ध, ईसा, मुहम्मद, कबीर, दयानन्द, गांधी सभी अपने विचारों के प्रचार में उन्मत्त प्रतीत होंगे। उनके सिद्धान्तों का प्रसार भी संसार में उनके भावुक अनुयायियों द्वारा हुआ है। बुद्ध के आनन्द आदि प्रमुख भिक्षु, ईसा के पितरस आदि हवारी, मुहम्मद के अत्युत्साही (जोशीले) अली और उमर आदि खलीफ़े इसके उत्तम उदाहरण हैं। इसी भांति पण्डित लेखराम भी महर्षि दयानन्द के अत्यन्त भावुक अनुयायी थे।

आर्यसमाज में तो कोई भी ऐसा व्यक्ति न होगा जो धर्मवीर पण्डित लेखराम आर्यपथिक के नाम और काम को न जानता हो, किन्तु आर्यसमाज से बाहर भी करोड़ों लोग पं. लेखराम के नाम से परिचित है। पंडित लेखराम की भावुकता ही सर्वसाधारण में उनके इस परिचय का मूल कारण बनी थी।

वह पंजाब के जेहलम जिले के एक अप्रसिद्ध ग्राम सैदपुर में एक अप्रसिद्ध सारस्वत ब्राह्मण कुल में जन्मे थे, परन्तु उनमें अपने पितृकुल की सैनिकवृत्ति से आया हुआ शरीर का गठन तथा क्षात्र तेज का कुछ अंश भी अवश्य विद्यमान था। उनके पितामह महता नारायणसिंह पंजाब के सिखकालीन विप्लव के वीर योद्धा थे और कई संग्रामों में अपना हाथ दिखा चुके थे। उन्हीं महता नारायणसिंह के पुत्र महता तारासिंह हुए जिनके पुत्र लेखराम का जन्म ८ चैत्र संवत् १९१५ विक्रमी को शुक्र के दिन उक्त सैदपुर ग्राम में हुआ था।

वे बाल्यकाल से ही भावुक तथा धार्मिक थे। अपने चाचा पं. गण्डाराम जी को एकादशी का व्रत करते हुए देखकर बालक लेखराम ने ११ वर्ष की अवस्था में बड़ी श्रद्धा से एकादशी का व्रत रखना विधिपूर्वक आरम्भ कर दिया था। उनको बाल्यकाल में केवल उर्दू–फारसी की शिक्षा मिली थी, क्योंकि उस समय पंजाब और संयुक्त प्रान्त में उसी के पढ़ाने की परिपाटी प्रचलित थी। यह शिक्षा आगे चलकर उनके मोहम्मदी मत की आलोचना करने में बहुत सहायक हुई। उनके विद्यार्थी जीवन में केवल यही बात उल्लेख योग्य है कि वे तब भी

स्वतन्त्रताप्रिय, प्रत्युत्पन्नमति तथा तात्कालिक उत्तर-प्रत्युत्तर प्रवीण थे और कविता की ओर भी उनका कुछ झुकाव था।

संवत् १९६२ के पौष मास में वे अपने चचा पं. गंगाराम इन्स्पेक्टर पुलिस की सहायता से पेशावर पुलिस में सारजेंट के पद पर नियुक्त हो गए। ऊपर बतलाया जा चुका है कि पं. लेखराम के बालहृदय में ही भावुकता तथा धार्मिकता का अंकुर विद्यमान था। एक धार्मिक सिक्ख सिपाही के सत्संग से उनकी प्रवृत्ति पूजा पाठ में प्रारम्भावस्था से ही हो चुकी थी। प्रात:काल स्नान-ध्यान में निमग्न रहते और गुरुमुखी में लिपिबद्ध भगवद्गीता का पाठ किया करते थे। श्रीकृष्ण की भक्ति में तन्मय रहते थे। जीव, ब्रह्म एकता के विश्वासी और वैराग्य प्रवण थे। २१ वर्ष की अवस्था में उनके माता-पिता ने उनको विवाह बन्धन में आबद्ध करना चाहा पर उन्होंने अपने वैराग्यवश उसको स्वीकार न किया। उनकी धर्म जिज्ञासा दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही गई। उन्हीं दिनों उनको लुधियाने के प्रसिद्ध स्वतन्त्र विचारक मुंशी कन्हैयालाल अलखधारी के ग्रंथ पढ़ने का अवसर मिला। अलखधारी जी के ग्रंथों से उनको ऋषि दयानन्द के आर्य धर्म प्रचार और आर्यसमाज की स्थापना का वृतान्त ज्ञात हुआ और उन्होंने डाक द्वारा ऋषि दयानन्द प्रणीत ग्रंथों को मंगाकर पढ़ना आरम्भ किया। उससे उनके विचार सर्वथा बदल गए और वे आर्यसमाजी बन गये।

वैदिक धर्मावलम्बी बन कर पं. लेखराम ने संवत् १९३७ के अन्तिम भाग में (सं. १९३६ वे. होना चाहिए) सीमा प्रान्त के यवनप्राय: पेशावर नगर में आर्यसमाज की स्थापना की। उस समय पेशावर आर्यसमाज के सर्वेसर्वा वे ही थे। वे और उनके चार-पांच साथियों से ही आर्यसमाज संगठित था। पं. लेखराम के मन में जीव ब्रह्म की एकता आदि के विषय में शंकायें उस समय तक बनी हुई थीं। उनकी निवृत्ति के लिए उन्होंने स्वयं आर्यसमाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द के दर्शन करने का निश्चय किया और साढ़े चार वर्ष की नौकरी के पश्चात् एक मास की छुट्टी लेकर १७ मई सन् १८८० ई. (सं. १९३६ वें) को अजमेर पहुँच कर सेठ फतहमल जी की वाटिका में ठहरे हुए ऋषि दयानन्द के प्रथम और अन्तिम बार दर्शन किये। इस समागम का वृतान्त उन्होंने स्वयं इस प्रकार लिखा है-

स्वामी दयानन्द के दर्शन से यात्रा के सब कष्ट विस्मृत हो गए और उनके सत्योपदेश से सब संशय निवृत्त हो गए। उन्होंने महर्षि से उन से जयपुर में एक बंगाली की उपस्थित की हुई यह शंका पूछी कि जब आकाश और ब्रह्म दोनों सर्वव्यापक है तो दो व्यापक एक स्थान पर कैसे रह सकते हैं। महर्षि दयानन्द ने एक पत्थर उठाकर कहा कि जिस प्रकार इसमें अग्नि, मिट्टी और परमात्मा तीनों व्यापक है उसी प्रकार ब्रह्माण्ड में आकाश और ब्रह्म दोनों व्यापक हैं सूक्ष्म वस्तु में भी उससे भी सूक्ष्मतर वस्तु व्यापक रहती है। ब्रह्म सूक्ष्मतम होने के कारण सर्वव्यापक है। पं. लेखराम जी लिखते हैं कि "इससे मेरी शान्ति हो गई।" उन्होंने महर्षि के अन्य संशय उपस्थित करने की आज्ञा देने पर दस प्रश्न पूछे थे। उनमें से तीन उन्होंने उत्तर सहित स्वयं लिखे हैं। शेष उनको विस्मृत हो गये थे।

प्रथम प्रश्न- जीव, ब्रह्म की भिन्नता में कोई वेद का प्रमाण बतलाइये।

उत्तर- यजुर्वेद का सारा चालीसवां अध्याय जीव, ब्रह्म का भेद बतलाता है।

द्वितीय प्रश्न- अन्य मतों के मनुष्यों को शुद्ध करना चाहिए या नहीं?

उत्तर- अवश्य शुद्ध करना चाहिए।

तृतीय प्रश्न- विद्युत् क्या वस्तु है और कैसे उत्पन्न होती है?

उत्तर- विद्युत् सब स्थानों में है और रगड़ से उत्पन्न होती है। बादलों को विद्युत् भी बादलों और वायु की रगड़ से उत्पन्न होती है।

"अन्त में मुझे आदेश दिया कि २५ वर्ष की आयु से पूर्व विवाह न करना।" ऋषि दयानन्द के स्वल्प सत्संग से पं. लेखराम के धार्मिक विचार दृढ़ हो गये और वैदिक धर्म पर उनका विश्वास चट्टान के समान अटल हो गया।

अजमेर से लौटकर उनको दिन-रात धर्म प्रचार की ही धुन लगी रहती थी। उन्होंने पेशावर आर्यसमाज की ओर से अपने सम्पादन में 'धर्मोपदेश' नामक उर्दू का मासिक पत्र जारी कराया। उसके साथ ही मौखिक व्याख्यान भी प्राय: देते रहते थे। कुछ दिनों पश्चात् उनकी बदली पेशावर से अन्य पुलिस स्टेशनों को हो गई। उनकी धार्मिक लगन के कारण उनके विधर्मी अफसर उनसे मनोमालिन्य रखने लगे थे। उधर पं. लेखराम को स्वतन्त्र आत्मा विगर्हित श्ववृत्ति (सेवावृत्ति) से दिनोंदिन खिन्न होती जाती थी। अन्त में उन्होंने २४ जुलाई सन् १८८४ (स. १९४१ वें) की सदा स्मरणीय तिथि को, पुलिस की सेवा से त्याग-पत्र दे दिया और उसमें यह भी लिख दिया कि दो महीने की कानूनी मियाद के पश्चात् मुझको रोकने का अधिकार किसी को भी न होगा। दो महीने पश्चात् ३० सितम्बर सन् १८८४ (सं. (१९४१ वें) को उन्होंने मनुष्यों के दासत्व से सदा के लिए मोक्ष लाभ किया। इस दासत्व श्रृंखला के कटते ही सारजेंट लेखराम, पं. लेखराम बन गये।

अहमदिया सम्प्रदाय और आर्यपथिक लेखरामजी

प्रारम्भ से ही इस्लाम की यह विशेषता रही है कि उसके अन्तरिक्ष में समय-समय पर अन्धड़ उठते रहे हैं। कोई एक व्यक्ति ऐसा उत्पन्न हो जाता है जो मजहब के नाम पर कुछ लोगों को इकट्ठा करके कुछ समय के लिए समाज के वातावरण में हलचल पैदा कर देता है। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण में रायबरेली के सैयद अहमद बोलवी नाम के मौलवी ने सिक्खों के विरुद्ध जिहाद की घोषणा करके एक देशव्यापी उत्पात मचा दिया था। उसके धर्मान्धानुयायी वहावी सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध हुए। प्रारम्भ के राजनैतिक स्वार्थ के कारण अंग्रेजी सरकार ने सिक्ख राज्य को हानि पहुंचाने के लिए उसे काफी बढ़ावा दिया, परन्तु सिक्खों का नाश हो जाने पर बहाबी लोग अंग्रेजी सरकार पर ही टूट पड़े तब सरकार ने उनका दमन कर दिया।

जिस राजनीतिक स्वार्थ से प्रेरित होकर अंग्रेजी सरकार ने प्रारम्भ में वहाबियों को बढ़ावा दिया था उसकी प्रेरणा से अलीगढ़ के आन्दोलन का जन्म हुआ और अब हम जिस नए सम्प्रदाय की चर्चा करने लगे हैं उसके विकास की तह में भी अंग्रेजी सरकार की वही नीति विद्यमान थी। जो व्यक्ति या जो सम्प्रदाय भारत की एकता तथा बढ़ती हुई राष्ट्रीयता में विघ्नकारी हो सकता था, सरकार उसकी पीठ पर हाथ रख देती थी, अन्य से चाहे वह कैसा ही बुरा हो। उस युग में पंजाब के गुरदासपुर ज़िले के कादियाँ गाँव में अहमदिया नाम के जिस सम्प्रदाय ने जन्म लिया वह इसी कोटि का था।

अहमदिया सम्प्रदाय का संस्थापक गुलाम अहमद कादियानी नया पैगम्बर बनकर मैदान में आया। उसने यह दावा किया कि 'मुझे खुदा की ओर से इलहाम होता है।' और यह भी दावा किया कि 'मैं मोजजे (चमत्कार) कर सकता हूँ।' आश्चर्य यह है कि एक ईश्वर और एक नबी को मानने वाले इस्लाम में सैकड़ों ऐसे लोग निकल आये जिन्होंने गुलाम अहमद के इस दावे को ठीक मान लिया और वे उनके शिष्य बन गये। बहुत से मुसलमान मौलवियों की ओर से उसके दावे का विरोध किया गया परन्तु सम्प्रदाय का दायरा बढ़ता गया यहाँ तक कि पंजाब के बहुत से नगरों में उसके केन्द्र स्थापित हो गए।

गुलाम अहमद बड़ा चतुर व्यक्ति था। पहले से ही उसने ऐसी नीति को अपनाया जिससे सरकार उससे प्रसन्न रही। वह सरकार बर्तानिया का बड़ा प्रशंसक और समर्थक बन गया। उसकी इस नीति का यह परिणाम हुआ कि प्रारम्भ से ही अंग्रेज अफसर उस पर रक्षा का हाथ रखने

लगे और अहमदिया को अपने राज्य का दृढ़ स्तम्भ मानने लगे।

जिन दावों के बल पर अहमदिया सम्प्रदाय खड़ा हुआ था, आर्यसमाज उनका कट्टर विरोधी था। इस कारण यह स्वाभाविक ही था कि दोनों की परस्पर टक्कर होती। पंजाब के जिस इलाके में कादियानी सम्प्रदाय का गढ़ था वह आर्यसमाज का भी प्रचार क्षेत्र था। जब आर्यसमाज की ओर से मिर्जा गुलाम अहमद के दावों का खण्डन होने लगा तब वह रुष्ट हो गया और अपने लेखों में न केवल आर्यसमाजियों की निन्दा करने लगा अपितु मुबाहिसे की जगह "मुबाहिला" करने लगा। इस्लाम की भाषा में मुबाहिले का अर्थ है शाप देना।

यह परिस्थिति तब थी जब धार्मिक वाद-विवाद के क्षेत्र में इस वीर पुरुष ने प्रवेश किया।

यों तो पुलिस की नौकरी में रहते हुए ही पंडित जी ने अहमदियों के भ्रमजाल का खण्डन आरम्भ कर दिया था, नौकरी से मुक्त होकर तो वे अपने पूरे आत्मिक बल को लेकर प्रचार युद्ध के मैदान में उतर आये। लाहौर आकर आपने गुलाम अहमद का एक विज्ञापन देखा जिसमें उसने अपने को खुदा का पैगम्बर घोषित किया था और साथ ही अन्य धर्म वालों को यह चुनौती दी थी कि वे उसके चमत्कारों को झूठा सिद्ध करके दिखायें। यदि कोई गैर मुस्लिम कादियों में एक वर्ष रहकर चमत्कार का कायल न हो तो मिर्जा ने उसे चौबीस सौ रुपये जुर्माने के तौर पर देने की भी घोषणा की थी। विज्ञापन पढ़ते ही पण्डित जी ने उसे पत्र लिखा जिसमें सूचना दी कि मैं तुम्हारे पास एक साल तक रहकर मोजजे का इम्तहान लेने को तैयार हूँ। मिरजा तक पण्डित लेखराम जी की तर्क शक्ति और निर्भयता की ख्याति पहुँच चुकी थी। वह उन्हें टालने के पत्र लिखता रहा, परन्तु पण्डित जी इस दम झाँसे में आने वाले कहाँ थे। वे स्वयं कादियाँ पहुँच गए और मिरजा के घर पर जाकर उसे ललकारा। जब इस पर भी वह चमत्कार दिखाने को तैयार न हुआ तो आपने कई दिन तक कादियां में वैदिक धर्म पर प्रभावशाली व्याख्यान दिये। उसका परिणाम यह हुआ कि एक जबरदस्त आर्यसमाज की स्थापना हो गई।

१८८६ ई. में पण्डित जी ने "नुसखा खत अहमदियान" नाम की एक और पुस्तक लिखी। यह पुस्तक गुलाम मोहम्मद की "सुरमा चश्म आर्य" के जवाब में लिखी गई थी इस प्रकार वह लेखों और व्याख्यानों द्वारा अहमदिया सम्प्रदाय के मायाजाल को काटने के साथ-साथ इस्लाम के अन्य प्रचारकों के आर्यसमाज पर किये गये आक्षेपों के उत्तर भी देते रहते थे। अब धीरे-धीरे उनका प्रचार का क्षेत्र बढ़ रहा था। वे विधर्मियों के आक्रमणों के उत्तर भी देते थे और वैदिक सिद्धान्तों के मण्डन में पुस्तकें भी लिखते थे। १८८७ ई. के आरम्भ में फिरोजपुर से निकलने वाले साप्ताहिक 'आर्य गजट' के सम्पादक बने और अन्य कई पुस्तकें भी लिखीं। यह जानकर शायद आज के पाठकों को आश्चर्य होगा कि इस प्रकार दिन-रात धर्म की सेवा करने वाला उपदेशक उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा से केवल २५ रुपये मासिक निर्वाह लेता था। यह था त्याग भाव जिसने उस युग में आर्यसमाज के प्रभाव को इतना विस्तृत और प्रबल कर दिया था।

१८८८ ई. में आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिवेशन में निश्चय हुआ कि महर्षि के जीवन-वृतान्त के संग्रह का कार्य किसी योग्य व्यक्ति के सुपुर्द किया जाये सबकी दृष्टि पं. लेखराम जी पर पड़ी। उन्हें यह काम सौंपा गया कि वे देशभर में घूमकर महर्षि के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली घटनाओं की छानबीन करें और जहाँ-जहाँ महर्षि गए वहाँ पहुँचकर लोगों से मिलें और यदि कोई लिखित सामग्री मिले उसे भी इकट्ठा करें। पं. लेखराम जी ने यह काम सहर्ष स्वीकार कर लिया और कमर कसकर देशभर में भ्रमण करने के लिए तैयार हो गए। आपके नाम के साथ 'आर्य मुसाफिर' या 'आर्यपथिक' का विशेषण तब ही से जोड़ा गया।

दो वर्ष तक अनथक परिश्रम करके आर्य पथिक ने महर्षि के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली जो जानकारी इकट्ठी की वह महर्षि के आज तक लिखे गए सभी जीवन चरित्रों की आधारशिला है। अन्य लेखकों ने भाषा या क्रम में परिवर्तन किया हो या सम्भव है कोई घटना भी नई जोड़ दी हो, परन्तु जीवन चरित्र की रूपरेखा आज भी वही है जो आर्यपथिक ने बना दी थी। यह उनके उग्र परिश्रम और सत्यनिष्ठा का ज्वलन्त प्रमाण है।

आर्य-पथिक का बलिदान

पं. लेखराम जी जब महर्षि दयानन्द के जीवन वृत्तान्त की सामग्री एकत्र करने के लिए देश में घूम रहे थे तब जीवन वृत्तान्त की सामग्री एकत्र करना तो एक प्रत्यक्ष निमित्त था। पण्डित जी की शक्तियाँ केवल उतने कार्य तक परिमित कैसे रह सकती थीं। उनके हृदय में प्रचार की अग्नि जल रही थी जहाँ जाते थे व्याख्यानों की झड़ी लगा देते थे। बीच-बीच में शास्त्रार्थ भी होते थे। साथ-साथ लिखने का कार्य भी चलता जाता था। पथिक जैसे अनथक वक्ता थे वैसे ही अनथक लेखक भी थे। अपनी थोड़ी-सी आयु में उन्होंने जितने व्याख्यान दिये और ग्रन्थ या लेख लिखे, उन्हें देखकर आश्चर्य होता है। ऐसा अनुभव होने लगता है कि शायद जीवन का एक क्षण भी उन्होंने अपना नहीं समझा था। सब कुछ महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के अर्पण कर दिया था।

उनके लेख सम्बन्धी कार्यों को दो हिस्सों में बाँटा जा सकता है पहले हिस्से में हम उन लेखों को रख सकते हैं जिनमें सामान्य रूप से इस्लाम और विशेषत: अहमदिया सम्प्रदाय के आचार्य मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी की कड़ी आलोचना की गई थी। पण्डितजी उर्दू, फारसी के विद्वान् थे। उनका उर्दू लेखकों में बड़ा रोब था। संस्कृत का भी उन्होंने अच्छा अभ्यास कर लिया था। इस कारण पडितजी के लेखों में युक्ति, प्रमाण और व्यंग्यों का बहुत सुन्दर मिश्रण रहता था। इस श्रेणी के ग्रन्थों में 'नुसखा खपत अहमदिया' और 'तकजीब बुराहीन अहमदिया' यह दो विख्यात पुस्तकें थीं। ईसाई धर्म के सम्बन्ध में भी आपने कई लेख लिखे। दूसरी कोटि के अन्य पर लेख अपने ढंग के अनूठे थे। वे ये अनुसन्धानात्मक। पहले ग्रन्थ का नाम था 'सृष्टि का इतिहास'। इसमें ऐतिहासिक और शास्त्रीय अनुसन्धान के आधार पर भारत के प्राचीन इतिहास की कई घटनाओं का विवरण दिया गया था। दूसरे ग्रन्थ में आवागमन के पक्ष में युक्तियों के अतिरिक्त विपक्षियों द्वारा किये गए प्राक्षेपों के उत्तर भी दिये गए हैं। पुनर्जन्म के पक्ष में २७ युक्तियां दी गई हैं। इन दोनों ही ग्रन्थों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि लेखक ने अपने शास्त्रों के अतिरिक्त बीसियों अंग्रेजी के ग्रन्थों से भी लम्बे-लम्बे उद्धरण दिये हैं जो अधिक आश्चर्यजनक है क्योंकि पण्डित जी अंग्रेजी बिल्कुल नहीं जानते थे वह दूसरों से अंग्रेजी की पुस्तकें और अखबार सुना करते थे और उसमें से जिन उद्धरणों की आवश्यकता होती थी उसका अनुवाद करा लेते थे। कभी-कभी एक उद्धरण के अनुवाद तीन-तीन व्यक्तियों से कराते थे और उनकी तुलना करके जिसे अधिक प्रामाणिक समझते थे, इसे पुस्तक में देते थे। उनके परिश्रम को देखकर आश्चर्य होता है। जो व्यक्ति रात-दिन भ्रमण करता रहे, जहाँ जाये वहाँ व्याख्यानों या शास्त्रार्थों में व्यस्त रहे वह अनुसन्धान से भरे ग्रन्थ लिख सके और वह भी आयु के केवल उनतालीस वर्षों में। इसे इच्छा शक्ति का चमत्कार ही समझना चाहिए।

खण्डनात्मक लेखों में पण्डित जी की भाषा बहुत जोरदार रहती थी। ओज उनका स्वाभाविक धर्म था। जब वह पेशावरी साफा, बन्द गले का कोट और पंजाबी ढंग का पाजामा पहनकर निकलते थे, तब देखने वालों को यह बिना कहे ही मान हो जाता था कि वह असाधारण व्यक्ति हैं। स्वस्थ शरीर, शेर जैसा गम्भीर स्वर और तेज से चमकती हुई आँखों को देखकर उनकी कार्यशक्ति का अनुमान लग जाता था। प्रसिद्ध शिष्टाचार या तकल्लुफ

जैसी वस्तु उनके पास भी नहीं फटक सकती थी। एक बार वह उत्तरप्रदेश में प्रचार के दौरे पर गए। वह खाना खा चुके और थाली से हाथ खींच लिया, तब भी शिष्टाचार के नियम के अनुसार परोसने वाले सज्जन ने खाना देने का आग्रह जारी रखा। यह बात पण्डित जी को बहुत अखरी और उन्होंने परोसने वाले को डाँटते हुए कहा कि क्या मैं झूठ कहता हूँ कि मुझे और भूख नहीं है।

एक दूसरे अवसर पर भोजन के बाद बिचारे गृहपति ने सभ्यता के विधिविधान का पालन करते हुए पान पेश किया। आपने डांट लगाई, "क्या मैं बकरी हूँ जो पत्ते खाऊंगा।" यज्ञ में बैठे हुए महाशय हाथ में चन्दन का रस लेकर आपके माथे पर लगाने लगे। आपने अपना हाथ आगे करते हुए कहा, "मेरे हाथ पर चन्दन लगा दो, माथे पर लगाओगे तो मुझे जुकाम हो जायेगा।" और पुस्तकों के प्रकरण में पण्डित जी की इन विशेषताओं की चर्चा मैंने इसलिए की कि उनके स्वभाव का यथार्थ रूप प्रकट हो जाये। उनके व्यवहार में एक विशेष खुरदरापन था जो वस्तुतः उनके अत्यन्त सरल, परन्तु ओजस्वी हृदय का परिणाम था। उन पर कवि का यह वचन पूर्ण रूप में लागू होता था–

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति।।

साधारण मनुष्यों के चित्त वज्र से भी कठोर, परन्तु फूल से भी अधिक कोमल होते हैं। उनके रहस्य को कौन समझ सकता है। उनके भाषणों के ही समान लेखों में भी भावों की सरलता के साथ कहीं-कहीं भाषा की कठोरता मिश्रित दिखाई देती है।

पं. लेखरामजी कई मासिक पत्रों के सम्पादक रहे। जब वे पेशावर में पुलिस में नौकर थे तभी आपने 'धर्मोपदेश' नाम का मासिक पत्र निकाला था। वह कुछ दिन चलकर बन्द हो गया। जब नौकरी छोड़कर आप आर्यसमाज के प्रचारकार्य में लवलीन हो गए, तब आप 'आर्यगजट' के सम्पादक बने। आर्यगजट का मुख्य उद्देश्य वैदिक सिद्धान्तों का मंडन और विरोधियों के आक्षेपों का खंडन करना था। थोड़े ही दिनों में सम्पादक के युक्तियुक्त ओजस्वी लेखों ने आर्यों और आर्येतरों के मन पर 'आर्यगजट' की धाक बैठा दी। ऋषि दयानन्द की जीवनी के लिए सामग्री संग्रह करते हुए जब आप अजमेर पहुँचे तब आर्यसमाज की सफलता को सूचित करने के लिए 'आर्यविजय' नाम सामयिक पत्र निकलवाया।

१८९३ में पण्डित जी की आयु ३५ वर्ष की हो चुकी थी। उस वर्ष आप सभा से अवकाश लेकर घर गए और मरी पर्वत के एक गाँव की कुमारी लक्ष्मी देवी से विवाह किया। सामान्य मनुष्यों के लिए विवाह जीवन का एक नया पड़ाव समझा जाता है जिसके पश्चात् उसकी दिनचर्या बदल जाती है, परन्तु आर्य पथिक साधारण मनुष्य नहीं थे। जीवन में परिवर्तन करने वाला विवाह तो बहुत पहले धर्म प्रचार की उग्र भावना से हो चुका था। लक्ष्मी देवी जी से उनका विवाह तो वैदिक आश्रम व्यवस्था की पूर्ति के लिए ही हुआ। विवाह के पश्चात् भी उन्हें केवल प्रचार की ही धुन थी। शायद कोई कप्ताह ऐसा हो जब घर पर गृहस्थों की तरह रहे हों। प्रचार के क्षेत्र में

यत्र-तत्र-सर्वत्र गरजते हुए सुनाई देते थे। १८९५ में आपके पुत्र उत्पन्न हुआ। उनका नाम सुखदेव रखा गया, परन्तु वह अधिक समय तक इस आर्य युगल को सुख न दे सका। लगभग एक वर्ष तक जीवित रहकर २८ अगस्त १८९६ के दिन शिशु सुखदेव ने अपनी जीवन यात्रा समाप्त कर दी। अभी बच्चे की माता रो ही रही थीं कि एक समाज से बुलावा था गया, आप बिस्तर बाँधकर चल दिये। लक्ष्मी देवी को आश्वासन देने का काम पण्डित जी के मित्रों को करना पड़ा। लक्ष्मी देवी सचमुच देवी थीं। वे अपने पति की ऊँची भावनाओं से अनभिज्ञ नहीं थी। उनके मुँह से कभी किसी ने शिकायत नहीं सुनी

कि वे परिवार की ओर ध्यान नहीं देते। विवाह के बाद उस देवी ने अपने आपको आर्य पथिक का ही एक आवश्यक अवयव मान लिया था। गृहस्थ हो जाने पर भी आर्यपथिक की यात्राओं में कमी नहीं हुई। जहाँ भी धर्मचर्चा का डंका बजता था वहाँ मोर्चे पर पण्डित जी दिखाई देते थे। यह उनके सम्पूर्ण सार्वजनिक जीवन की चर्या थी। मिर्जा गुलाम अहमद ने कादियां से धमकी दी तो निर्भय सिपाही शत्रु के दुर्ग में जा धमका। हैदराबाद, सिन्ध और बूँदी जैसे एक दूसरे से दूरस्थ स्थानों से जब समाचार मिले कि कोई आर्य धर्मावलम्बी विधर्म में जा रहा है तो आप तुरन्त वहाँ पहुँच गए और रक्षा कर ली। जब पंजाब में आर्यसमाज के दोनों दलों में मांस-भक्षण पर झगड़ा चला तब पण्डित जी अपनी प्रकृति के अनुसार पूरे जोर से मांसभक्षण के विरुद्ध आन्दोलन करने लगे। लाहौर में हों या जोधपुर में, जहाँ से आप को यह बू भी आ जाती मांस भक्षण पर विवाद चल रहा है, वहाँ आप दौड़ कर पहुँच जाते और वादविवाद की कमान अपने हाथ में ले लेते। १८९४ के पश्चात् आप यह भी सोचने लगे थे कि इस्लामी देशों में जाकर वैदिक धर्म का प्रचार करें।

इसी प्रकार की घटना जोधपुर में हुई। उसमें जहाँ आर्यपथिक की दृढ़ सिद्धान्त भक्ति का प्रमाण मिला, वहाँ इसका भी एक दृष्टान्त प्रकट हो गया कि सच्चे और झूठे विश्वास में क्या भेद होता है। जोधपुर के राजा कर्नल प्रतापसिंह महर्षि दयानन्द के शिष्यों में से थे। उनकी वैदिक धर्म के सिद्धान्तों में श्रद्धा थी, परन्तु एक विषय में अन्य आर्यपुरुषों से मतभेद था। वे मांस भक्षण करते थे। इतना ही नहीं, वे यह भी कहते थे कि महर्षि दयानन्द क्षत्रियों द्वारा मांस भक्षण को वेदविरुद्ध नहीं मानते थे। उनके पास दोनों पक्षों के विद्वान् जाते और अपनी सम्मति देते थे। धीरे-धीरे यह चर्चा फैल गई कि कर्नल प्रतापसिंह को प्रसन्न करने और उनसे भेंट लेने का एक ही उपाय है कि उनके सामने वेद तथा शास्त्रों के प्रमाणों से क्षत्रियों के मांस भक्षण का समर्थन किया जाये कुछ संन्यासी और पण्डित जोधपुर जाकर जम गए। उनका यही काम था कि राजा साहब की हाँ में हाँ मिला कर पारितोषिक प्राप्त करें। इटावा के पं. भीमसेन शर्मा की गिनती ऋषि के शिष्यों में की जाती थी। वे महर्षि के 'वेद भाष्य' आदि ग्रन्थों के निर्माण में लेखक का कार्य करते थे। उस समय के पत्र व्यवहार के देखने से प्रतीत होता है कि महर्षि अपने इस शिष्य के व्यवहार से सन्तुष्ट नहीं थे। वे उसे पूरा विश्वासपात्र नहीं मानते थे। कर्नल प्रतापसिंह के सलाहकार साधुयों ने अपने पक्ष को पुष्ट करने के लिए पं. भीमसेन को जोधपुर निमन्त्रित किया। भीमसेन जी उससे पूर्व अपने मासिक पत्र 'आर्यसिद्धान्त' में मांस भक्षण का खण्डन कर चुके थे। जोधपुर पहुँच कर मांस भक्षण के पक्ष में सम्मति देने में थोड़ा बहुत संकोच किया, परन्तु अन्त में इस रूप में सहमति प्रकट कर दी कि यदि क्षत्रिय हानिकारक पशुओं को मारकर उनका मांस खा ले तो कोई पाप नहीं। यह समाचार जब पं. लेखराम जी को मालूम हुआ तो वे तुरन्त जोधपुर जा पहुँचे और भीमसेन के कन्धे पर जोर से हाथ रखते हुए कहा, 'ईश्वर जानता है, यदि तूने महाराज के पास जाकर साफ-साफ यह न कह दिया कि मांस भक्षण वेद विरुद्ध है, तो तुझे आर्यसमाज में या किसी और धार्मिक सोसायटी में मुँह दिखलाने लायक न छोड़ूँगा।'' भीमसेन जी पर पं. लेखराम जी की सिंहगर्जना का ऐसा प्रभाव हुआ कि मन का लोभ दब गया और भय प्रधान हो गया। दूसरे दिन महाराज के पास विदा के लिए जाने के समय शर्मा जी ने दृढ़ता से कह दिया कि मांस भक्षण वैदिक धर्म के विरुद्ध है।

इन्हीं दिनों अमेरिका के शिकागो नगर की प्रदर्शिनी की तैयारियां हो रही थीं। आर्यसमाज की ओर से कोई विशेष प्रतिनिधि भेजने का विचार हो रहा था। लेखराम ने एक अपील छपवा कर मार्गव्यय और एक अंग्रेजी के सुयोग्य विद्वान् की सेवा मांगी। यद्यपि कोई तैयार न

हुआ, परन्तु इससे उनका धर्म के प्रति उत्कट प्रेम सिद्ध होता है। यदि वे अंग्रेजी जानते होते तो अवश्य अमेरिका जा पहुँचते।

६ अप्रैल, १८९४ को सूर्यग्रहण के मेले पर कुरुक्षेत्र में आर्यसमाज की ओर से प्रचार का प्रबन्ध किया गया। महात्मा मुन्शीराम के साथ लेखराम भी वहाँ गये। वहाँ पर उनका व्याख्यान बड़ा चित्ताकर्षक हुआ जिस का विषय था-धर्म की असलियत और उसका आन्दोलन। शंका समाधान भी यही करते थे। ७, ८, ९ अप्रैल को करनाल आर्यसमाज के उत्सव पर दो व्याख्यान दिये और शंका समाधान की। पण्डित लेखराम के पांव में फोड़ा हो गया था जो चलने फिरने से खराब हो गया था। पण्डित जी ने कुछ सभासदों से पूछा- किसी आर्य डॉक्टर के पास मुझे ले चलो तो फोड़ा दिखाऊँ। एक अधिकारी ने किसी मुसलमान का नाम लिया तो इन्होंने पूछा- क्या कोई आर्य डॉक्टर नहीं है? इस पर किसी आर्य सज्जन ने कहा- इलाज में आर्य अनार्य्यना क्या घुसा है? यह सुनते ही आर्य पथिक की आंखें लाल हो गई और बोले 'खाक आर्यसमाज है। एक डॉक्टर को भी आर्य नहीं बना सकते।' इस पर महात्मा मुन्शीराम जी ने हंस कर कहा क्या जिस समाज का डॉक्टर सदस्य न हो तो क्या उसे आर्यसमाज ही नहीं कहा जाए। लेखराम ने कुछ गम्भीर होकर कहा -''जिस आर्यसमाज ने डॉक्टरों, स्कूल के अध्यापकों और विद्यार्थियों को आर्य नहीं बनाया उसने क्या खाक काम किया? जड़ को सींचने से ही वृक्ष हरा होता है।''

पण्डित जी सन्ध्यावन्दन में बड़े पक्के थे। एक बार इन्हीं महात्मा मुन्शीराम जी के साथ शिक्रम में लुधियाना से जगरांव जा रहे थे, मार्ग में पानी लेकर शौच गये। लौटने पर पता लगा कि हाथ-पैर धोने और कुल्ला के लिये पानी नहीं है। सन्ध्या का समय हो चुका था। पण्डित जी सन्ध्या करने बैठ गये। जब सन्ध्या समाप्त कर चुके तब एक व्यक्ति ने दिल्लगी में पूछा- पण्डित जी! क्या पेशावरी सन्ध्या कर चुके! पण्डित जी ने गम्भीर स्वर कहा- तुम पापी हो जो बिना पानी मिले ब्रह्मयज्ञ नहीं कर सकते। भोले भाई! स्नान कर्म है, हुआ वा न हुआ, परन्तु सन्ध्या धर्म है और उसका न करना पाप है। पण्डित जी व्यायाम भी नित्य किया करते थे।

पण्डित जी ज्वर से निर्बल हों, सफर से थके हुए हों, पुत्र मृत्यु शय्या पर लेटा हो, परन्तु कहीं से समाचार आ जाये कि अमुक व्यक्ति को मुसलमान होने से बचाने के लिए आइये वे तत्काल चल देते थे। उन्होंने जो अपनी दिनचर्या बनाई थी, उस में यह भी लिखा था- ''कटु वचन तथा झूठ से अलग रहना और ''दीन-ए-इसलाम'' की विषयुक्त शिक्षा के बुरे प्रभाव को दूर करने का प्रयत्न और इसी प्रकार दूसरे मतों का भी और वैदिक धर्म का प्रचार ईश्वर! मेरी इच्छा को आप पूर्ण कर दो।'' यह पंक्तियां स्वयं लेखराम के धर्म सेवा की लगन को बोल कर कह रही है। शुद्धि की तो अनेक घटनाएँ है। एक यह है।

एक बार उन्हें कहीं से पता लगा कि पायल (पटियाला रियासत) में अमुक व्यक्ति आर्य धर्म को छोड़ रहा है। आप ट्रेन पर सवार हो चल दिये। जब गाड़ी लुधियाना से आगे चली, एक व्यक्ति ने इनसे पूछा कि आप कहाँ जायेंगे? उन्होंने कहा- चावा-पायल। उसने कहा यहाँ तो गाड़ी ठहरती नहीं। इन्होंने कहा- अच्छा देखो तो मुझे बड़ा जरूरी काम है। जब गाड़ी चावा-पायल स्टेशन पर पहुँची और न रुकी तब आपने बिस्तर बाहर फेंका और गाड़ी से कूद गये। कपड़े फटे और कुछ चोट भी आई। वहाँ से चलकर पायल पहुँचे और समाज के मंत्री से कहा-अमुक व्यक्ति के पास चलो। देवयोग से वह व्यक्ति मिल गया। पण्डित जी ने उससे कहा कि मैंने सुना हैं कि आप हिन्दू धर्म को छोड़ कर अन्य मत में जा रहे हैं। कृपया आप बताइये कि इस मत में क्या दोष है तथा उस मत में क्या विशेषता है जिससे आप इसे छोड़ कर उसे ग्रहण कर रहे हैं। उस

व्यक्ति ने कहा–पहले आप यह बतायें की आप की यह दशा क्यों है? कपड़े फटे हैं, शरीर में खोंच के निशान हैं। पण्डित जी ने कहा- आप के लिये आया था। गाड़ी स्टेशन पर नहीं रुकी, अत: कूद कर उतरा है। उसने उत्तर दिया–पण्डित जी! जिस मत में आप जैसे जान पर खेलने वाले पुरुष हैं, मैं उस धर्म को नहीं छोड़ सकता।

लेखराम जो को दुनिया की परवाह नहीं थी। अपनी आत्मा को देखते थे। एक बार कहीं से प्रचार करते हुये जालन्धर आये। वर्षा में कपड़े भीग चुके थे धोने और सुखाने का समय नहीं था। दूसरे ही दिन जरूरी प्रोग्राम पर जाना था। उन्होंने महात्मा मुंशीराम जी से कपड़े लिये साफ कमीज को अन्दर पहना और मैले को ऊपर पहन लिया। उन्होंने पूछा- पण्डित जी यह क्या किया। लेखराम जी ने उत्तर दिया–दुनिया की परवाह मुझे थोड़े ही है। वह तो यही कहेगी कि कपड़े मैले हैं। शरीर के साथ का कपड़ा स्वस्थ्य होना चाहिये, मैले कपड़े पहनने से तो मैं ही रुग्ण होऊँगा। बाहरी टीपटाप की उन्होंने कभी आवश्यकता अनुभव नहीं की। आन्तरिक स्वच्छता का ध्यान अधिक था। कपड़े के बनाव चुनाव को जनानापन कहा करते थे।

उनमें मितव्यय और ईमानदारी थी। जहाँ कुली से असबाव उठा कर ले जाने में बचत होती वहाँ इक्का गाड़ी नहीं करते थे। जहाँ कहीं उतरने से इनका का काम भी होता वहाँ सभा से किराया नहीं लेते। एक बार सभा के कार्यालय में पण्डित जी का बिल आया जिसमें उन्होंने सहाले से लाहौर तक का किराया तो लिखा था। लाहौर से सहिला तक का नहीं लिखा था। मंत्री के पूछने पर आपने उत्तर दिया- लाहौर से सहाले तक का किराया मैंने जानबूझकर नहीं लिखा, क्योंकि वहाँ आधा कुछ मेरा न्रिज का काम था और ऐसा किराया में वसूल नहीं किया करता।

आर्य पथिक में किस प्रकार की निर्भयता की और वैदिक धर्म के प्रचार और प्रसार के लिये उनका हृदय किस प्रकार कार्य कर रहा था इस सम्बन्ध में एक दो घटनाओं का जिक्र करना अप्रासंगिक न होगा। पण्डित लेखराम मार्च १८९६ में अजमेर के उत्सव में सम्मिलित हुये। नगर कीर्तन में उनके व्याख्यान और बातचीत से कुछ मुसलमान भड़क उठे। ख्वाजा चिश्ती की दरगाह पास थी आर्य भाई डर कर भाग गये। लेखराम अकेले रह गये उन्होंने कहीं पर सुना था कि विधर्मी के धर्म मन्दिर से तीस कदम की दूरी पर प्रत्येक धर्म प्रचार को अपने मत के समर्थन का अधिकार है। आप दरगाह के द्वार पर पहुँचे और उच्च स्वर से कदम गिनना शुरू किया। मुसलमान इनकी हरकतों को अचरज की निगाह से देख रहे थे। तीस कदम पर पहुँच कर लेखराम ने धर्म प्रचार शुरू कर दिया। कब्रपरस्ती और मर्दुमपरस्ती का जबर्दस्त खंडन किया। जब पीछे से कुछ आर्यसमाजी चुपके से लेखराम की हालत देखने गये तो वे आश्चर्यस्तम्भित हो गये। सहस्त्रों मुस्लिम जनता को बड़ी संख्या को उन्होंने वक्ता के आधीन पाया।

जुलाई १८९६ में शिमला में पण्डित जी ने अपने अन्तिम व्याख्यान में इस विषय पर प्रमाण दिये कि इस्लाम के पैगम्बरों ने खुदाई का दावा करके कुफ्र फैलाया है। मुस्लिम मण्डली में से एक युवक से न रहा गया। उसने चीख कर कहा काफिरों को काटने वाली मुहम्मदी शमशीर को मत भूलो। लेखराम एक क्षण रुक गये और जिधर से आवाज आई थी, उधर मुंह करके गरजते हुये बोले 'मुझे बुजदिल मुहम्मद तलवार की धमकी देता है। मैंने अधर्मी निर्बल मनुष्यों से डरना नहीं सीखा। जानत नहीं हो मैं जान हथेली पर लिए फिरता हूं।'' सारी सभा में सन्नाटा छा गया और फिर किसी ने चूँ तक नहीं की।

पण्डित जी की ऊहा बुद्धि तो कमाल की थी। उसकी एक घटना और पढ़िये। गुजरात आर्यसमाज में आर्य पथिक मुसलमानों के 'हराम हलाल' मसले पर बोल रहे थे। पण्डित जी का कहना था कि जो जानवर

कमजोर है वह तो मुसलमानों के लिए हलाल हैं। जो जर्बदस्त हैं वे हराम हैं। इस पर एक मौलवी ने एतराज किया क्या चुहिया भी हमारे मजहब में जबर्दस्त होने से ही हराम है। पण्डित जी ने उनसे पूछा कि मौलवी साहब आप शिया हैं या सुन्नी? उत्तर मिला– शिया। तब पण्डित जी ने उत्तर दिया– ''मौलवी मुझे आपका कथन सुन कर हंसी आती है। आप शिया होकर चूहे की बुजुर्गी और जबर्दस्ती से इन्कार करते हैं यहाँ नामुराद चूहा था कि जिनके कर्बला के मैदान में पानी की मशके काट दीं और बेचारे इमान हुसैन को प्यासा मरवाया। अगर ऐसे दो तीन और जबर्दस्त पैदा हो जायें तो अरब और ईरान में कर्बला की सी कई घटनायें हो जायें।'' श्रोतागण यह जबाब सुन कर हंस पड़े। मौलवी साहब ने तो चुप हो ही जाना था।

इतनी तेजस्विता और इतनी तेजी साधारण संसार में बहुत देर तक नहीं चल सकती। कुछ काल के पीछे दैव ही उसका रास्ता रोकने का उपाय सोचने लगता है। महर्षि के जीवन की सामग्री एकत्र हो जाने पर जब आपने उसे लिखने का काम प्रारम्भ किया तब आप जालन्धर में रहने लगे। उस समय जालन्धर आर्यसमाज का बहुत बड़ा केन्द्र बन चुका था। उसके संस्थापकों में दो महानुभाव मुख्य थे– एक लाला देवराजजी और दूसरे लाला मुन्शीराम जी। लाला देवराज जी कन्या महाविद्यालय के संचालन में एकाग्रता से लग गये और लाला मुन्शीराम जी पहले जालन्धर आर्यसमाज के प्रधान और फिर प्रचार का कार्य बढ़ जाने पर आर्य प्रतिनिधि सभा के भी प्रधान बने। इसके अतिरिक्त आपने 'सद्धर्म प्रचारक' नाम के साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। पं. लेखराम जी का उनसे बहुत प्रेम था। जीवन के अन्तिम हिस्से में तो आर्य पथिक मानो उनके अभिन्न मित्र बन गये थे। पण्डित जी को जालन्धर में रहने से एक यह भी लाभ था कि सद्धर्म प्रचार प्रेस से पुस्तकों की छपाई में भी बहुत सहायता मिल सकती थी। १८९७ के आरम्भ में वह जालन्धर छोड़कर लाहौर चले गये। यह

स्थान परिवर्तन किसी निमित्त से हुआ या दैवयोग से यह कहना कठिन है कहा जा सकता है कि यदि कोई निमित्त भी था तो उसका कारण ईश्वरेच्छा थी। आर्य पथिक को अमर पदवी मिली थी यह भी उसका एक कारण बन गया। मिर्जा अहमद कादियानी के साथ इनका विवाद रहता ही था और धीरे-धीरे जब मिर्जा के पास आर्य पथिक की जबरदस्त युक्तियों का कोई उत्तर न रहा तो वह धमकियों पर उतर पाया। मुबाहिसे में हार का मुबाहिला (शापों का आक्रमण) जारी कर दिया। गुलाम अहमद ने यह भविष्यवाणी की कि यदि मैं सच्चा हूँ और लेखराम झूठा है तो एक साल के अन्दर-अन्दर ख़ुदा की मार पड़ेगी। इसके उत्तर में पण्डित लेखराम जी ने यह आशीर्वाद दिया कि ईश्वर की ऐसी कृपा होगी कि मिर्जा झूठ को छोड़कर सच को मानने लगेगा। मिर्जा ने जो भविष्यवाणी की, प्रतीत होता है कि उसकी पूर्ति के उद्योग में भी कोई कसर न छोड़ी।

पण्डितजी के बलिदान की घटना का संक्षिप्त और हृदयस्पर्शी वर्णन पं. चमूपति जी के शब्दों में पढ़िये वे अपने इतिहास में लिखते हैं– ''मार्च १८९७ के आरम्भ में एक कुरूप मुसलमान इनके पास शुद्धि के लिए आया इन्होंने उसका आगा पीछा कुछ नहीं पूछा। पूर्ण विश्वासपूर्वक अपने पास रख लिया। दिन को वह इनके पास रहता और रात को नित्य कहीं चला जाता। इन्हें यह भी ज्ञात नहीं था कि वह रात को कहाँ रहता है? ६ मार्च को वह कम्बल ओढ़ कर आया और काँपने लगा। पूछने पर उसने बताया कि उसे बुखार और पेट का दर्द है। पण्डित जी उसे डॉक्टर के पास ले गये। डॉक्टर ने कम्बल उतार कर लेप करना चाहा पर उसने पीने की दवाई मांगी। इन्होंने वही ले दी। एक बजाज की दुकान पर ले जाकर माता जी को दिखाने के लिए उसे कपड़े ले दिये। बजाज ने सावधान किया कि यह भयंकर प्रकृति

का मनुष्य मृत्यु की मूर्ति प्रतीत होता है, परन्तु पण्डित जी तो आज स्वयं मृत्यु से ही प्यार करने चले थे। यम के दूत को ही कभी का घर पर निमन्त्रण दे रखा था। उसी को मानो यह सद्धर्म का पिपासु समझते रहे थे।

घर पर आकर ऋषि को जीवनी लिखने बैठे। वह भी पास की एक कुर्सी पर बैठ गया ज्यों ही थक कर उन्होंने कलम रखा और छाती खोलकर अंगड़ाई लेने लगे, उस अभ्यस्त हत्यारे ने वहीं छुरी निकाल कर इनके पेट में घोंप दी। और घुमा-घुमा कर एक आंतड़ी तो काट ही डाली और आठ बड़े और अनेक छोटे घाव कर दिये। पण्डित जी ने एक हाथ से अपनी अंतड़ियों को संभाला और दूसरे हाथ से उससे दस्तपंजा लिया। इसी कशमश में सीढ़ियों तक पहुँच गये। देवी लक्ष्मी ने पहुंच कर इन्हें रसोई में धकेल दिया और वृद्धा माता ने घातक को जा पकड़ा। पर इतने में हत्यारे के हाथ बेलन गया जिसकी दो चोटों से उसने माता जी को अचेत कर नीचे फेंक दिया और अपने साथ यह जा वह जा आन की आन में आँख से ओझल हो गया।

इस घायल अवस्था में पण्डित जी को हस्पताल ले जाया गया। वहाँ भी इनका प्रभु पर विश्वास एवं अटूट धैर्य नहीं टूटा, नहीं टूटा। गायत्री तथा 'विश्वानि देव' का पाठ ही करते रहे। मरते दम तक न माता की चिन्ता थी प्राण प्रिया लक्ष्मी की। चिन्ता थी तो इस बात की कि 'समाज' से तहरीरी काम बन्द नहीं होना चाहिए। यह कहा और रात्रि दो बजे विदा हुए।

वीर की अर्थी के साथ सहस्त्रों मनुष्यों का तांता लग रहा था। लाहौर के नरनारी इस निर्भीक युवक के बलिदान पर अत्यन्त क्षुब्ध थे। पृथ्वी पर हर जगह फूल ही फूल दीखते थे। गुलाब के पानी के कंटर पर कंटर बहा दिये गए। आर्य जाति में एक नई स्फूर्ति थी; नया आवेग था प्रतीत यह था कि एक धर्मबीर के बलिदान ने सम्पूर्ण जाति को नया जीवन प्रदान कर दिया है। पवित्रता का पारावार था। उत्साह ठाठें मार रहा था। साहस की बाढ़ आ गई थी। जिधर देखो कर्मण्यतापूर्ण वैराग्य था।

''श्मशान भूमि में अद्‌भुत दृश्य था। शहीद की चिताग्नि ने मानो सब नरनारियों के परस्पर भेदों को जलाकर राख कर दिया था। सबके मन में जो भाव था उसे लाला मुन्शी राम जी ने अपने भावुकता से भरे.हुए भाषण में इन शब्दों में प्रकट किया था- ''हम सबको चाहिए कि हम वीर की चिता के समीप खड़े हो कर यह प्रतिज्ञा करें कि आपस की फूट को हटाकर प्रेमपूर्वक मिलकर काम करेंगे। यदि फूट चलती रही तो मेरे लिए काम करना तो बहुत असम्भव हो जायगा।''

''श्मशान भूमि के भाषणों में पण्डित जी का यह वाक्य सुनाया गया कि 'मेरे पीछे तहरीर का काम बन्द न होने पावे।' आर्यनेताओं ने उपस्थित जनता के सामने संकल्प प्रकट किया कि तहरीर के काम को बन्द न होने देंगे।'' किन्तु क्या इस प्रतिज्ञा का हम पालन कर सके?

चैत्र संवत् २०२७ जन-ज्ञान मासिक से साभार

परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम

०१.	साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर	-	११ से १८ जून-२०२३
०२.	दम्पत्ति शिविर	-	२४ से २७ अगस्त-२०२३
०३.	साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर	-	२९ अक्टूबर से ०५ नवम्बर-२०२३

कृपया शिविर में भाग लेने के इच्छुक शिविरार्थी पूर्व से ही प्रतिभाग की सूचना दें।

प्रात:काल यज्ञोपरान्त प्रवचन के क्रम में आ. रणजित् ने बताया कि शुद्ध ज्ञान, शुद्ध कर्म और शुद्ध उपासना से मुक्ति होती है। वेद मन्त्रों के माध्यम से शुद्ध ज्ञान प्राप्त कर शुद्ध कर्म करके शुद्ध उपासना कर सकते हैं। **स न पितेव सूनवे अग्ने** इस मन्त्र में कहा जा रहा है कि हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता आप हमारे लिए बड़ी सरलता से प्राप्त होने योग्य हो जाइए जैसे पुत्र के लिए पिता सरलता से प्राप्त हो जाता है। जब भी पुत्र चाहे अपने पिता से मिल सकता है। अपने पिता को अपनी बात बता सकता है। ऐसे ही एक भक्त कह रहा है कि हे प्रभो! मैं भी जब चाहूं तभी आपको प्राप्त करूं। जब चाहूं तभी आपको स्मरण करूं। उसमें कोई बाधा ना हो और आप हमें कल्याण से युक्त कीजिए। हम कल्याण से जुड़े रहे। कल्याण हमसे दूर ना हो और यह कल्याण धर्म के आचरण से होता है। यम नियम के आचरण से होता है। हमें अपने आचरण में देखना है, कहाँ कमी है और उसे दूर करना है। यदि वास्तव में ज्ञान होगा तो हमारे मन में जैसा ज्ञान हैं वैसा ही हम कर्म कर पाएंगे नहीं तो केवल शाब्दिक ज्ञान हुआ है।

शंका समाधान के क्रम में मुनि सत्यजित् ने बताया कि यह जीवन चक्र चल रहा है इससे पता चलता है कि मुक्ति हो रही है। यदि वापस लौटना ना होता तो यह संसार कब का समाप्त हो गया होता। कुछ लोग मानते हैं कि अविद्या या माया से युक्त होकर ब्रह्म ही जीव बन जाता है। परमात्मा का ही अंश मानते हैं उनके लिए तो मुक्ति है ही नहीं।

मन से किए गए कर्मों का फल कर्माशय में जाकर जाति आयु, भोग के रूप में नहीं मिलता बल्कि जब जाति, आयु, भोग मिलता है उसके साथ मानसिक कर्मों का प्रभाव या परिणाम ऐसा होता है कि उन उन कर्मों के भोग के समय मानसिक स्थितियां भी वैसी ही बन जाती है, क्योंकि बिना वैसी मानसिक स्थिति बने कर्म का ठीक ठीक भोग संभव नहीं है। संसार में देखते हैं कि कुछ लोगों के पास पर्याप्त धन संसाधन आदि होते हैं पर उनकी ऊंची मानसिक स्थिति नहीं होती और कुछ लोगों की मानसिक स्थिति अच्छी होती है पर उनके पास धन संसाधन आदि कम होते हैं। यह मानसिक कर्मों के परिणाम या प्रभाव ही है। किसी का शरीर सुन्दर, स्वस्थ है पर मानसिक स्थिति सात्विक नहीं होती। किसी का शरीर सुन्दर नहीं है पर मानसिक स्थिति सात्विक होती है। जिन्होंने सेवा, परोपकार आदि अधिक किया है। उनको सुख सुविधाएं अधिक मिलेगी। जिन्होंने स्वाध्याय, साधना, सत्संग आदि अधिक किया है उनको बुद्धि सात्विक मिलेगी। कई लोग सेवा परोपकार आदि पुण्य कर्म करते हुए भी राग द्वेष में फंसे रहते हैं। कर्म का फल केवल सुख देना नहीं है साथ ही जीवन में आगे उन्नति का अवसर देना भी कर्म का फल है। ऐसे ही पाप कर्मों का फल भी उन्नति का अवसर नहीं मिलना और दु:ख मिलना भी है।

दूसरी शंका विवाह, नौकरी या कोई विशेष निर्णय भी हमारे पूर्व कर्माशय के आधार पर हम करते हैं, क्योंकि उस समय ऐसी मानसिक स्थिति या पिछले कर्माशय ,संस्कारों के आधार पर होती है। वर्तमान का पुरुषार्थ भी साथ में होता ही है। विवाह आदि के बाद भी जो सुख-दु:ख मिलते हैं उसमें भी पूर्व कर्मों का प्रभाव रहता है। तीसरी शंका जो पदार्थ में विष है तथा जो पदार्थों से विष उत्पन्न होता है। उनको हमें हटाकर उसका प्रयोग करना चाहिए अर्थात् भोजन को शोधन करके जल को छान करके पीना चाहिए। भोज्य पदार्थ किसी प्रकार दूषित ना हो, बासी ना हो, कीटाणु रहित करके उसका उपयोग करे। शरीर में भी जो विष उत्पन्न होता है उसे भी हटाते रहे। जैसे हल्दी, धनिया, कड़ी पत्ता आदि शरीर के पाचन को सुधार करते हैं और शरीर को स्वस्थ रखते हैं। भोजन का ठीक पाचन न होने से आम विष बनता है इसलिए भोजन सुपाच्य, हल्का करना चाहिए। भूख ठीक ना हो तो खाया गया भोजन ठीक

नहीं पंचता इससे संधियों में मल जमा होते हैं। इन सब का हमें शोधन करते रहना चाहिए।

आचार्य मनोजित् जी ने चाणक्य नीति के आधार पर पशु पक्षियों से हमें क्या क्या सीखना चाहिए। इन बातों को बड़े ही रोचक ढंग से विस्तारपूर्वक बताया। सिंह और बगुले से एक-एक गुण, मुर्गे से चार गुण कौवे से पांच गुण, कुत्ते से छह गुण और गधे से तीन गुण कुल बीस गुण सीख लेना चाहिए।

वानप्रस्था श्री विशोका मुनि जी ने धर्म के दस लक्षणों पर रोचक ढंग से चर्चा की साथ ही यह भी बताया कि हम जितने जितने आर्यसमाज के विचारों को अपने जीवन में अपनाएंगे व धर्म का आचरण करेंगे। उतना ही हमारा जीवन विशिष्ट बनता जाएगा।

महर्षि दयानन्द जी की २०० वीं जयंती के शुभारंभ के अवसर पर आचार्य विद्यानन्द जी ने बताया कि महर्षि किस विपरीत स्थितियों में रह करके अपना जीवन सच्चे शिव की खोज और मृत्यु से बचने के लिए घर से निकले थे। गुरु विरजानन्द जी के यहाँ समर्पण भाव से रहकर के आर्ष अनार्ष का विवेक प्राप्त किया और पूरा जीवन वैदिक धर्म, वेदों का प्रचार किया। आर्यसमाज की स्थापना की। वेदभाष्य किया। गोकृष्यादि रक्षिणी सभा व परोपकारिणी सभा की स्थापना की। उन्हीं की देन है कि आज हम सभी वेद पढ़ने मे व यज्ञ आदि के करने में समर्थ हैं, स्वतंत्र हैं। उन्होंने अपना कोई आश्रम, मठ आदि नहीं बनाया। वे जहां-जहां गए वह स्थान आज हमारे लिए तीर्थ स्थल बन गया है।

परोपकारिणी सभा के पूर्व मन्त्री श्री करणजी शारदा की पुत्री श्रीमती मंजू जी व श्री कृष्ण कुमार जी ने अपनी ६०वीं विवाह वर्षगांठ सपरिवार ऋषि उद्यान में आकर के वैदिक मंत्रों से आहुति दे करके मनाया। इस अवसर पर मुनि सत्यजित् ने उन्हें आशीर्वाद दिया तथा बताया कि पत्नी के लिए पति मुख्य है तथा पति के लिए पत्नी मुख्य है। यदि परिवार में कोई निर्णय करना हो सास ससुर से बच्चों से व अन्य परिवार के लोगों से तो मुख्यता पति पत्नी अपनी ही रखें। विवाह के समय ही दोनों इस बात की प्रतिज्ञा करते हैं की हम मित्रवत व्यवहार करेंगे। हम दोनों के हृदय एक दूसरे से मिले हुए हो सुख दु:ख लाभ हानि धन आदि हम दोनों का एक समान है। दोनों एक दूसरे की भावनाओं को समझें और एक दूसरे की बातों को भी ध्यानपूर्वक सुने। बात करते समय बीच में फोन ना रखें गृहस्थ में पति पत्नी के बीच मैत्री भाव होना अत्यन्त आवश्यक है। पति के लिए पत्नी देवी और पत्नी के लिए पति को देव के रूप में समझें। पति का आधा पुण्य पत्नी को और पत्नी का अच्छा कार्य पति को प्राप्त होता है।

भजन के क्रम में पण्डित भूपेन्द्र जी ने वेद स्वाध्याय सत्संग करते रहो एक दिन प्राप्त सद्ज्ञान हो जाएगा, दुर्जन संग से क्या से क्या बन जाए ये भजन गाया।

श्री आदित्य मुनि जी मुझे ऐसा बना दो परमपिता, श्रीमान् वासुदेव जी ने महर्षि दयानन्द जी के २००वीं जयन्ति के शुभारंभ के अवसर पर दयानन्द देव वेदों का उजाला लेके आए थे। यह भजन गाया।

अजमेर निवासी ऋषि उद्यान से जुड़ी हुई श्रीमती दीपा माता जी की पुत्री का जन्मदिवस सायंकाल यज्ञ करके जन्मदिवस मनाया। ऋषि उद्यान के कर्मचारी श्री पृथ्वीराज ने पुत्री तेजस्वी का १२वें जन्मदिवस पर प्रात: यज्ञ किया व आचार्य कर्मवीर जी ने उन्हें आशीर्वचन दिया।

श्री प्रवीण माथुर ने परिवार व डॉ. नरेश धीमान् के साथ अपने पिता स्वर्गीय श्री राजेन्द्र माथुर की प्रथम पुण्यतिथि पर ऋषि उद्यान आकर सांयकाल यज्ञ कर उनको स्मरण किया। आचार्य शक्तिनन्दन जी ने उनके पिताजी के सद्गुणों की चर्चा की।

परोपकारिणी सभा के भूतपूर्व सदस्य श्री भगवान्सहाय जी की पत्नी श्रीमती कला देवी जी का लगभग ८५वें साल में १० फरवरी रात में देहावसान हो गया। अगले दिन सांय ३:०० बजे के लगभग जहाँ महर्षि दयानन्द जी की भी अन्त्येष्टि हुई थी। वहीं उनकी भी अंत्येष्टि वैदिक मन्त्रों से की गई। ऋषि उद्यान के आचार्यगण, ब्रह्मचारीगण, व आश्रमवासी, पारिवारिक लोग, आस-पड़ोस के लोग सम्मिलित हुए। **- आचार्य ज्ञानेन्द्र**

परोपकारी ग्राहकों हेतु आवश्यक सूचना

परोपकारी के अनेक सदस्यों की यह शिकायत रहती है कि उन्हें पत्रिका प्राप्त नहीं हो रही है। रजिस्टर्ड डाक से पत्रिका भेजने पर डाक व्यय बढ़ जाता है। सदस्यों से निवेदन है कि जो रजिस्टर्ड डाक से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं, वह निम्नानुसार डाक व्यय सभा के खाते में अग्रिम रूप से जमा करके कार्यालय को सूचित कर दें। रजिस्टर्ड डाक का व्यय (पत्रिका शुल्क के अतिरिक्त) निम्न प्रकार है-

१. प्रत्येक अंक (वर्ष भर २४ अंक) रजिस्टर्ड डाक से मंगाने पर – डाक व्यय – १०००/-

२. एक मास के दो अंक- एक साथ मंगाने पर वार्षिक – डाक व्यय – ५००/-

३. एक वर्ष के २४ अंक- एक साथ मंगाने पर – डाक व्यय – १००/-

बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings) संख्या-10158172715** **IFSC-SBIN0031588**

email : psabhaa@gmail.com सूचना देने हेतु चलभाष – **8890316961**

गुरुकुल प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषिउद्यान, अजमेर में संस्कृत भाषा, पाणिनीय व्याकरण, वैदिक दर्शन, उपनिषदादि के अध्ययन हेतु प्रवेश आरम्भ किये गए हैं। इन्हें पढ़कर वैदिक विद्वान्, उपदेशक, प्रचारक बन सकते हैं। कम से कम दसवीं कक्षा उत्तीर्ण १६ वर्ष से बड़े युवकों को प्रवेश मिल सकता है। प्रवेशार्थी को पहले ३ माह का अस्थाई प्रवेश दिया जाएगा। इस काल में अध्ययन व अनुशासन में सन्तोषजनक स्थिति वाले युवकों को ही स्थाई प्रवेश दिया जाएगा। सम्पूर्ण व्यवस्था निःशुल्क है। गुरुकुल में अध्ययन के काल में किसी भी बाहर की परीक्षा को नहीं दिलवाया जाएगा, न उसकी अनुमति रहेगी। प्रवेश व अधिक जानकारी के लिए-

चलभाष : ७०१४४४७०४० पर सम्पर्क कर सकते हैं। सम्पर्क समय- अपराह्न ३.३० से ४.३०।

शुल्क वृद्धि की सूचना

परोपकारी के पाठकों बडे भारी मन से सूचित करना पड रहा है कि कागज के मूल्य और छपाई के अन्य साधनों के मूल्यों में बेतहाशा वृद्धि के कारण जनवरी 2023 से सदस्यता शुल्क बढाना पड रहा है। बढी हुई दरें इस प्रकार से हैं –

भारत में

एक वर्ष -	400/-	पांच वर्ष -	1500/-
आजीवन (20 वर्ष) -	6000/-	एक प्रति -	20/-

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते? तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में पञ्चमहायज्ञ अवश्य करणीय कर्म हैं। इन्हीं में से एक है- अतिथि यज्ञ। प्रत्येक गृहस्थ के लिए अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और वह राशि एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल/आश्रम में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय। इस राशि को प्रदान कर सभा के माध्यम से अतिथि यज्ञ सम्पन्न कर सकते हैं।

सभा की योजना के अनुसार प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी होता सदस्यों में अंकित किया जाता है, ऐसे सज्जनों के नाम परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक/सभा के खाते में ऑनलाइन द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। **आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।**

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि, जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे, तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। राशि जमा करने के पश्चात् दूरभाष द्वारा कार्यालय को अवश्य सूचित करें। दूरभाष - 8890316961

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-10158172715 **IFSC-SBIN0031588**

email : psabhaa@gmail.com **सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961**

दानदाताओं की सूची

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ जनवरी २०२३ तक)

१. श्री रविकान्तपाल, गाजियाबाद २. सुरुचि, सरदारशहर ३. श्रेय्या आर्य, सरदारशहर ४. श्रेयेश आर्य, सरदारशहर ५. डॉ. योगेश आर्य, रोहतक ६. श्री स्पर्श मित्तल, मेरठ ७. श्री रामजीवन मिश्रा, जयपुर ८. श्री कश्मीरीलाल सिंहल, गीदडबाह ९. श्री महावीर याद्व, जयपुर १०. श्रीमती कौशल गुप्ता, गाजियाबाद ११. श्री ओमप्रकाश खेरा, दिल्ली १२. श्री नन्दकिशोर खेरा, दिल्ली।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गोशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गोशाला के दानदाता

(१६ से ३१ जनवरी २०२३ तक)

१. श्री ब्रजमोहन आर्य, दिल्ली २. डॉ. स्वशीलता दुर्गापाल, अजमेर ३. श्री राधेश्याम शर्मा, अजमेर ४. तुलिका कृष्ण साहू, विलासपुर ५. श्री यज्ञयेश शर्मा, गुरुग्राम ६. श्री उमेशचन्द्र त्यागी, अजमेर ७. श्री सार्थक, गुरुग्राम।

अन्य प्रकल्पों हेतु सहयोग राशि

१. श्रीमती कौशल गुप्ता, गाजियाबाद २. श्री देवमुनि, अजमेर ३. श्री नाथूलाल त्रिवेदी, अजमेर ४. श्रीमती रामप्यारी त्रिवेदी, अजमेर ५. श्री अभिषेक चौहान, दिल्ली ६. श्री प्रशान्त मैत्र्य, दिल्ली ७. मै. अजमेर फूड प्रॉडक्टस प्रा. लि., अजमेर ८. मै. राजपूताना मयूज्कि हाउस, अजमेर ९. श्री नरेश कुमार, करनाल १०. श्री प्रेमलाल दुग्गल, सूरत।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में कई वर्ष से संचालित आयुर्वेदिक चिकित्सालय का पुन: आरम्भ २६ अगस्त को किया गया है। यह चिकित्सालय सोमवार को छोड़ सप्ताह में ६ दिन मार्च से अक्टूबर सायं ५ से ७ बजे तक व नवंबर से फरवरी सायं ४ से ६ बजे तक दो घण्टे खुलेगा।

इसमें वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक की सेवा उपलब्ध है। चिकित्सा परामर्श व चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। यदि आप अपने धन को इस पुण्य कार्य में लगाना चाहते हैं, तो परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सहयोग भेज सकते हैं। सहयोग भेजकर ८८९०३१६९६१ पर सूचित अवश्य कर देवें। - **मन्त्री**

'सत्यार्थ प्रकाश' एवं 'महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' ने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति 'वैचारिक क्रान्ति' को जन्म दिया। अतः परोपकारिणी सभा ने ७ वर्ष पूर्व 'विश्व पुस्तक मेला' दिल्ली में प्रतिवर्ष **'सत्यार्थप्रकाश'** के साथ **'महर्षि का जीवन-चरित्र'** एवं **'आर्याभिविनय'** पुस्तक का वितरण करने की योजना बनाई; जो निरन्तर चल रही है।

एक सैट की छपाई का खर्च लगभग १५० रु. आता है। **५०० से कम प्रतियों पर स्टिकर लगाकर तथा ५०० या अधिक प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित किया जाएगा।**

१५० रु. प्रति सैट के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं।

अपने दान के साथ 'सत्यार्थप्रकाश वितरण' अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	३०००/- रु.
	३० प्रतियाँ	४५००/- रु.
	५० प्रतियाँ	७५००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	१५०००/- रु.
	५०० प्रतियाँ	७५०००/- रु.
	१००० प्रतियाँ	१,५०,०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी राशि दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। धन्यवाद।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

SBI Payments

MERCHANT NAME : PROPKARNI SABHA
UPI ID : PROPKARNI@SBI

SCAN & PAY

BHIM
SBI Pay
BHIM UPI

सभा प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

बैंक विवरण

खाताधारक का नाम

परोपकारिणी सभा, अजमेर

(PAROPKARINI SABHA AJMER)

बैंक का नाम

भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-

10158172715

IFSC - SBIN0031588

UPI ID : PROPKARNI@SBI

स्वामी दयानन्द की 200 वीं जयन्ती के शुभारम्भ कार्यक्रम में
परोपकारिणी सभा के पदाधिकारी एवं सदस्यगण

आर जे/ए जे/80/2021-2023 तक प्रेषण : २८ फरवरी २०२३ आर.एन.आई. ३९५९/५९

महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय अजमेर के 10 वें दीक्षान्त समारोह में अध्यक्षीय भाषण देते राजस्थान के माननीय राज्यपाल कलराज मिश्र

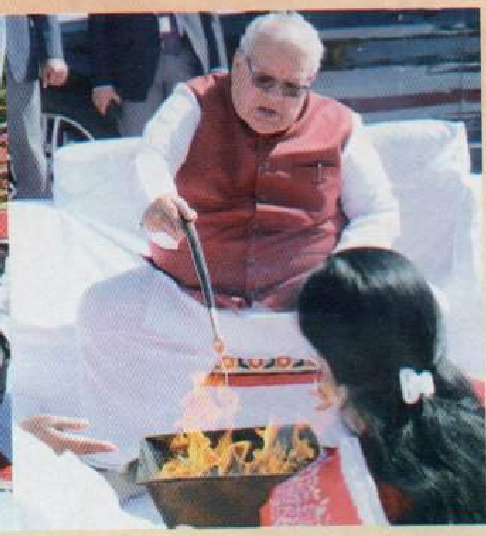

महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान अजमेर के ब्रह्मचारी एवं आचार्य कर्मवीर आर्य यज्ञ कराते हुए एवं आहुतियाँ प्रदान करते राज्यपाल

प्रेषकः
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००१

सेवा में,